Con. 4. VIII.4.49
320

अंक 8
संख्या 4

बृहस्पतिवार
19 मई
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

# भारतीय संविधान-सभा

## के

## वाद-विवाद

## की

## सरकारी रिपोर्ट

**( हिन्दी संस्करण )**

---

**विषय-सूची**

पृष्ठ

संविधान का प्रारूप..... 197-264
[नवीन अनुच्छेद 72-क, ख और ग, अनुच्छेद 73, 74, 75, नवीन अनुच्छेद 75-क, अनुच्छेद 76, 77, 78, नवीन अनुच्छेद 78-क, अनुच्छेद 79, नवीन अनुच्छेद 79-क, अनुच्छेद 80, 81, 82, नवीन अनुच्छेद 82-क अनुच्छेद 83, 84 तथा 85 पर विचार]

# भारतीय संविधान-सभा

**बृहस्पतिवार, 19 मई सन् 1949 ई.**

---

*माननीय अध्यक्ष (डा. राजेन्द्र प्रसाद) की अध्यक्षता में कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 8 बजे संविधान-सभा की बैठक हुई।*

---

## संविधान का प्रारूप—(*जारी*)

## नवीन अनुच्छेद 72-क, ख और ग

***अध्यक्षः** अब हमें विधान के अनुच्छेदों पर वाद-विवाद करना है। प्रो. के.टी. शाह के संशोधन संख्या 1498 पर विचार करना है।

***प्रो. के.टी. शाह** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, मैं नवीन अनुच्छेद 72-क को पेश नहीं करना चाहता हूं। मैं केवल 72-ख और 72-ग को पेश करूंगा। यह संशोधन जिस रूप में यहां छपा हुआ है उसमें मुझे एक मुद्रण त्रुटि दिखाई देती है। संसद का ''मंत्री'' शब्द नहीं हो सकता है, बल्कि संसद का ''सदस्य'' शब्द है। आपकी अनुमति से मैं सही शब्द रख रहा हूं।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 72 के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किये जायें—

''That after article 72, the following new articles be inserted:—

'72-B. A Member of Parliament may vacate his seat by resignation in writing addressed to the Speaker of the People's House, or to the Chairman of the Council of States, as the case may be. Any Member of Parliament who accepts any office or post carrying a salary, shall be deemed forthwith to vacate his seat, and cease to be a Member of Parliament. No one shall continue to be a Member of either House who is convicted of any offence of—

(a) treason against the sovereignty, security, or integrity of the State,

(b) of bribery and corruption,

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[प्रो. के.टी. शाह]

(c) of any offence involving moral turpitude, and liable to a maximum punishment of two years rigorous imprisonment.

72-C. All expenses in connection with Election to Parliament of all candidates, whether at the time of a General election or a Bye-election shall be defrayed out of the public Treasury, in accordance with a scale prescribed by Parliament; provided that any candidate securing less than 10 per cent of the votes cast at the election shall not be entitled to claim such expenses.' ''

[72-ख. संसद का सदस्य लोक सभा अध्यक्ष को अथवा राज्य-परिषद् के सभापति को, जैसी स्थिति हो, सम्बोधित लिखित त्याग-पत्र द्वारा अपने स्थान को रिक्त कर सकेगा। संसद का कोई सदस्य यदि किसी वेतन के पद को स्वीकार कर लेगा तो उसी समय से उसका स्थान रिक्त समझा जायेगा और संसद का सदस्य नहीं रहेगा। कोई भी सदस्य जो–

(क) राज्य की सर्वोच्चसत्ता, प्रतिभूति अथवा अक्षुण्णता के प्रति द्रोह,

(ख) उत्कोच और भ्रष्टाचार,

(ग) नैतिक पतन सम्बन्धी कोई अपराध जिसके लिये अधिकतम दो वर्ष के कड़े कारावास का दण्ड हो,

के किसी अपराध का दोषी प्रमाणित हो चुका हो तो दोनों आगारों में से किसी आगार का सदस्य न रहेगा।

72-ग. समस्त उम्मीदवारों का संसद के निर्वाचन का सारा खर्च, चाहे वह सामान्य निर्वाचन के समय हुआ हो या उप-निर्वाचन के समय, लोक-विधि से संसद द्वारा विनिहित परिमाण के अनुसार दिया जायेगा; परन्तु निर्वाचन में दिये गये मतों में से 10 प्रतिशत के कम मत प्राप्त करने वाले किसी उम्मीदवार को इस खर्च के मांगने का अधिकार न होगा।]

श्रीमान्, ये दो बातें जिनके प्रविष्ट करने का मैं सुझाव रख रहा हूं सर्वप्रथम उस विधि का निर्धारण करती हैं जिनके द्वारा संसद के सदस्य अपना पद त्याग कर सकते हैं अथवा अपने पद से अलग हो सकते हैं। किसी सदस्य के निर्वाचन होने के पश्चात् भी यदि कोई सदस्य उपरोक्त अपराधों में से किसी भी अपराध के प्रति दोषी है तो विशेषकर संसद में भाग लेने और मत देने की निर्योग्यता को महत्त्व देना चाहिये। यह

स्पष्ट है कि कोई भी व्यक्ति जो देशद्रोह, उत्कोच अथवा भ्रष्टाचार या नैतिक पतन सम्बन्धी किसी अपराध के प्रति दोषी प्रमाणित हो चुका है तो वह संसद में भाग लेने के लिये अयोग्य होगा। मेरे विचार से, कोई ऐसा तंत्र होना चाहिए जिसके द्वारा ऐसे व्यक्ति नियमित रूप में निर्वाचित होने पर भी संसद की सदस्यता से अपने आप पृथक् हो जायें।

खर्चे के दृष्टिकोण से दूसरी बात और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। मैं सुझाव रखता हूं कि निर्वाचन का सारा खर्च किसी विनिहित परिणाम के अनुसार लोक-निधि से दिया जाये; और यदि कोई व्यक्ति मतों में से निश्चित प्रतिशत मत प्राप्त करने में असमर्थ होता है तो उसे इस खर्च के मांगने का अधिकार न होना चाहिये। इसके रखने से मेरा प्रयोजन यह है कि एक कमी जो प्रजातंत्रवाद को वास्तविक व्यवहार में असफल बनाती है वह इतने बड़े देश में केन्द्रीय संसद जैसी लोक संस्थाओं में प्रतिनिधान प्राप्त करने के लिये प्रयास करने में और निर्वाचन में प्रयास करने में भारी खर्चा है। साधारण खर्चे की राशि इतनी अधिक हो जायेगी कि केवल बड़े-बड़े दल जिनके पास बहुत फण्ड है वे ही चुनाव लड़ सकेंगे, जो कदाचित् महीनों तक लड़े जायेंगे और जिनमें मत प्राप्त करने के प्रचार हेतु सैकड़ों कार्यकर्त्ता होंगे। वे लोग जो किसी दल से सम्बन्धित नहीं हैं यदि अपने बुते पर चुनाव लड़ सकते हैं तो उनके पास चुनाव लड़ने के लिये बैंक में बहुत रुपया होना चाहिये। इसका यह अर्थ तो कदापि नहीं है कि जिन व्यक्तियों के पास अपने निजी साधन पर्याप्त हैं या जो व्यक्ति बड़े-बड़े सुसंगठित दलों में, जिनके पास बड़ी-बड़ी धन-राशियां हैं, प्रभावशाली हैं वे ही सर्वोत्तम लोक प्रतिनिधि हैं। अतः मैं सुझाव रखता हूं कि निर्वाचन का खर्च लोक-निधि द्वारा पूरा किया जाये जिससे कि धनवान उम्मीदवारों को निर्धनों की अपेक्षा अनुचित अथवा अनुपयुक्त लाभ न हो सके—यह प्रथा अन्य स्थानों में भी है।

मैं यह भी सुझाव रखता हूं कि खर्चे के परिमाण को भी नियत कर देना चाहिये जिससे कि इस विशेषाधिकार का दुरुपयोग न हो। मैंने यह सुझाव रखा है कि दोनों सामान्य निर्वाचन तथा उप-निर्वाचन का खर्च लोक-निधि से पूरा किया जाये। मैंने यह अभिरक्षण भी रख दिया है कि कोई भी उम्मीदवार जो दिये गये मतों में से 10 प्रतिशत से कम मत प्राप्त करता है वह इस खर्चे की मांग नहीं कर सकता है। यह एक प्रकार की प्रत्याभूति है जिसके कारण कोई उम्मीदवार इस सहायता और सुविधा का दुरुपयोग नहीं करेगा। प्रावधान, जिसको मैं रख रहा हूं, उन उम्मीदवारों की सारवत् सहायता करेगा जो धन के अभाव के कारण इस प्रकार की लोक सेवाओं में आगे न आ सकेंगे।

मैं समझता हूं कि यह सिद्धांत ही इस सभा में इस अनुच्छेद को प्रस्तुत करने के लिये पर्याप्त रूप से पुष्ट है।

***अध्यक्षः** क्या प्रो. के.टी. शाह के इस संशोधन पर कोई सदस्य बोलना चाहता है?

***श्री एच.वी. कामतः** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह समझ लेता हूं कि प्रो. शाह ने 72-क को पेश नहीं किया है और 72-ख और 72-ग को ही पेश किया है।

[श्री एच.वी. कामत]

श्रीमान्, मैं 72-ख के सम्बन्ध में निवेदन करता हूं कि अभी ऐसे किसी नवीन अनुच्छेद की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि प्रो. शाह उस अनुच्छेद को देखने का कष्ट उठायेंगे जो अभी थोड़ी देर के बाद हमारे सामने आयेगा अर्थात् अनुच्छेद 83, तो वे यह देखेंगे कि उसमें सदस्यों की निर्योग्यता की, चाहे संसद में सदस्य के रूप में चुने जाने के लिये हो या सदस्य के रूप में बने रहने के लिये हो, व्यवस्था है। उपखण्ड (क), (ख), (ग), (घ) और (ङ) में विभिन्न निर्योग्यतायें दी हुई हैं। इस रूप में उपखण्ड (ङ) व्यापक है कि कोई व्यक्ति, जो संसद के किसी कानून के अन्तर्गत या उसके द्वारा निर्योग्य कर दिया गया है तो यह संसद के दोनों आगारों में से किसी आगार में सदस्य चुने जाने और बने रहने के लिये निर्योग्य हो जायेगा। यह सच है कि प्रो. शाह ने जिन सम्भावनाओं को प्रकट किया है वे उपखण्ड (क), (ख), (ग) और (घ) में नहीं हैं। श्रीमान्, आपने कल वयस्क-मताधिकार के अन्तर्गत जो खतरे हैं उनके प्रति तथा जो व्यापक अधिकार और विशेषाधिकार इस विधान के द्वारा दिये जा रहे हैं उनके प्रति जो शंकायें प्रकट की थीं उनके होते हुए भी, मैं आशा करता हूं कि नवीन संसद जिसका इस विधान के अनुसार निर्वाचन होगा वह ऐसे व्यक्तियों की बनाई जायेगी जो बुद्धिमान होंगे और लोक सेवा की भावना से ओत-प्रोत होंगे और इन सब कमियों तथा हानियों के होते हुए भी हम इस संसद के लिये ऐसे व्यक्तियों का निर्वाचन कर सकेंगे जो विवेक और बुद्धिमानी से देश तथा निर्वाचक मण्डल के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन कर सकें। मुझे पूर्ण विश्वास है कि नवीन विधान के अनुसार निर्मित नवीन संसद ऐसे नियम बनायेगी जिनके द्वारा जिन अपराधों का नवीन खण्ड 72-ख में प्रो. शाह ने उल्लेख किया है उनमें से किसी भी अपराध के प्रति दोष प्रमाणित व्यक्ति सदस्य के रूप में संसद के किसी आगार में न भाग ले सकेगा और न उसका सदस्य बना रहेगा। जिस विषय का संशोधन में वर्णन किया गया है वह इतना स्पष्ट है कि कोई भी व्यक्ति जो शुद्ध लोक भावना से ओत-प्रोत है वह यह न कहेगा कि जो सदस्य देशद्रोह, उत्कोच अथवा भ्रष्टाचार या नैतिक पतन सम्बन्धी किसी अन्य अपराध के प्रति दोषी प्रमाणित हो चुका है तो उसको संसद के किसी आगार में सदस्य बना रहने दिया जाये। यह केवल संसद के आगारों के लिये ही अपमानजनक नहीं है वरन् जिन लोगों ने उनको संसद के सदस्य के रूप में निर्वाचित किया है उनकी सद्भावना तथा विवेक के प्रति भी यह अपमानजनक है। अत: मैं अनुभव करता हूं कि प्रो. शाह का 72-ख संशोधन अभी अनावश्यक तथा असामयिक है। 72-ग के सम्बन्ध में मैं समझता हूं कि वह केवल कार्यप्रणाली का विषय है जिसको बाद में जबकि संसद के समक्ष संसद के निर्वाचन तथा उप-निर्वाचन की कार्यप्रणाली का विषय प्रस्तुत होगा उस समय लिया जा सकता है। अत: मैं समझता हूं कि दोनों संशोधन असामयिक हैं और अभी इन पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। मैं सभा से निवेदन करता हूं कि वह दोनों संशोधनों को अस्वीकार करे।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम): मेरे माननीय मित्र प्रो. शाह में 72-ख और 72-ग दो संशोधन पेश किये हैं। मैं देखता हूं कि मैं अपने माननीय मित्र से सहमत होने के लिये तैयार नहीं हूं। 72-ख के अन्तर्गत मेरे माननीय मित्र चाहते हैं कि यदि कोई संसद का सदस्य नैतिक पतन का अपराधी है तो वह सदस्य नहीं रहेगा। जैसा की

श्री कामत ने बताया है यह अनुच्छेद 83 में दिया हुआ ही है। अतः यह यहां बिल्कुल निरर्थक है। इसके अतिरिक्त यदि वे इस संशोधन को पेश करना ही चाहते हैं तो इसे वे जबकि हम अनुच्छेद 83 पर विचार-विमर्श करें उस समय पेश करें।

72-ग में मेरे माननीय मित्र प्रो. शाह का संकेत यह है कि उन सब उम्मीदवारों का खर्च जो संसद के चुनाव के लिये खड़े होते हैं, सरकारी तथा लोक-निधि द्वारा पूरा किया जाये। मैं इस बात का भी विरोध करता हूं क्योंकि संसार के किसी भी सभ्य देश में, जहां जनतंत्र के आधार पर संसदात्मक पद्धति है, यह प्रथा नहीं है। हमको करोड़ों रुपया खर्च करना होगा। साथ ही साथ उन लोगों की संख्या की ओर भी ध्यान दीजिये जो जबकि उनको यह मालूम हो जायेगा कि उनको अपनी जेब से खर्च न करना पड़ेगा तो निर्वाचन के लिये खड़े होंगे। यदि प्रो. शाह यह ठीक समझते हैं कि उम्मीदवारों को व्यक्तिगत रूप में अपना धन खर्च नहीं करना चाहिये तो वह दल, जो उनको उम्मीदवार बनाकर खड़ा करता है, रुपया खर्च करे न कि सरकार रुपया खर्च करे। मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं क्योंकि अभी हमारा देश इतना धनवान नहीं है कि उम्मीदवारों का वैयक्तिक खर्च उठा सके।

***प्रो. के.टी. शाहः** यदि मुझे आज्ञा है तो मैं अपने संशोधन 72-ख को वापस करना चाहूंगा।

सभा की अनुमति से यह संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 72 के पश्चात् निम्न नवीन खण्ड प्रविष्ट किया जाये:—

'All expenses in connection with Election to Parliament of all candidates whether at the time of a General election or a Bye-Election shall be defrayed out of the Public Treasury, in accordance with a scale prescribed by Parliament; provided that any candidate securing less then 10 per cent. of the votes cast at the election shall not be entitled to claim such expenses.' ''

(समस्त उम्मीदवारों का संसद के निर्वाचन का सारा खर्च, चाहे वह सामान्य निर्वाचन के समय हुआ हो या उप-निर्वाचन के समय, लोक-निधि से संसद द्वारा विनिहित परिमाण के अनुसार दिया जायेगा; परन्तु निर्वाचन के दिये गये मतों में से 10 प्रतिशत से कम मत प्राप्त करने वाले किसी उम्मीदवार को इस खर्च के मांगने का अधिकार न होगा।)

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

---

## अनुच्छेद 73

***मि. तजम्मुल हुसैन:** श्रीमान्, आगे बढ़ने से पूर्व मैं यह जानना चाहूंगा कि क्या आप इस समय अनुच्छेद 73 को ले सकेंगे क्योंकि हमको यह कहा गया था कि केवल उन्हीं अनुच्छेदों पर विचार-विमर्श किया जायेगा जो निर्वाचन विषय से सम्बन्ध रखते हैं जिससे कि मतदाताओं कि नामावलियां जितनी शीघ्र हो सकें उतनी शीघ्र तैयार की जा सकें। मैं निवेदन करता हूं कि अनुच्छेद 73 निर्वाचन विषय से सम्बन्ध नहीं रखता है; वह अध्यक्ष, उपाध्यक्ष इत्यादि के पदों के सम्बन्ध का है।

***अध्यक्ष:** हम निर्वाचन विषय से सम्बन्धित अनुच्छेदों को लेना चाहते थे पर मुझसे यह कहा गया कि माननीय सदस्य उसके लिये पूर्ण रूप से तैयार नहीं हैं और उन अनुच्छेदों पर विचार करने के लिये वे एक या दो दिन और चाहते हैं। इसी कारण से मैंने उनकी बात मान ली और अगले सोमवार से हम उन अनुच्छेदों पर विचार करेंगे।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 73 विधान का अंग बने।''

*(संशोधन संख्या 1499, 1500 और 1501 पेश नहीं किये गये।)*

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिम बंगाल : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं संशोधन संख्या 1502 को पेश करना चाहूंगा। वह शाब्दिक संशोधन नहीं है।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 73 के खण्ड (2) में 'another member' (किसी अन्य सदस्य) शब्दों के स्थान में 'a member' (किसी सदस्य) शब्द रखे जायें।''

जिस रूप में मूल विषय है वह कदाचित् किसी अन्य सदस्य के निर्वाचन के पक्ष में है न कि उस सदस्य के पक्ष में जो अब उपसभापति न रहेगा। अनुच्छेद 74 के अनुसार यदि उपसभापति सदस्य नहीं रहता है तो वह अपना पद रिक्त करेगा या पद त्याग करेगा। जब उपसभापति का निर्वाचन होगा तो उसको बिना उसके किसी कसूर के चुनाव लड़ने से रोक दिया जायेगा। मैं निवेदन करता हूं कि जाने वाले उपसभापति को, यदि उसका पुर्निर्वाचन हो सकता है, तो चुनाव लड़ने के अधिकार देने के लिये ''किसी अन्य सदस्य'' शब्दों के स्थान में ''किसी सदस्य'' शब्द रखे जायें।

अनुच्छेद 74 के उपखंड (ग) में एक सम्भावना है जबकि उपसभापति को विश्वास के अभाव के कारण हटाया जायेगा। यह मैं नहीं जानता हूं कि उसके लिये भी चुनाव लड़ने की आज्ञा है या नहीं। जो कुछ भी हो, यह एक ऐसा विषय है जिस पर विचार करने की आवश्यकता है और यदि इस पर मसौदा-समिति विचार कर लेती है तो मुझे संतोष होगा क्योंकि उपखण्ड (ग) में कुछ उलझनें हैं। यह भी हो सकता है कि उसे चुनाव न लड़ने दिया जाये परन्तु दूसरी स्थिति में तो ऐसी कोई बात नहीं है कि उसको क्योंकर उम्मीदवार न बनने दिया जाये।

एक और बात है जिसको यदि अनुमति दी जाती है तो मैं यहां प्रकट करूंगा। अनुच्छेद 73 के खण्ड (1) में जो कुछ हम स्वीकार कर चुके हैं उसको केवल दुहराया ही गया है और वह केवल पुनरावृत्ति मात्र है। खंड (1) में कहा गया है। ''भारत का उपप्रधान पद-कारणात राज्य-परिषद् का सभापति होगा''। मैं सभा का ध्यान अनुच्छेद 53 की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। वह अनुच्छेद 73 के खंड (1) के समान है।

अनुच्छेद 43 भी इसी प्रकार का है। उसमें कहा गया है: ''उपप्रधान अपने पद-कारणात राज्य-परिषद् का सभापति होगा'' इसके लिये कुछ शर्ते हैं और एक परादिक है। मैं निवेदन करता हूं कि यही प्रावधान शब्द प्रति शब्द अनुच्छेद 43 में स्वीकार किया जा चुका है जो और भी अधिक पूर्ण है। हमने अनुच्छेद 53 में इन्हीं पदों में इसी प्रावधान को रखा है। अत: उपखंड (1) केवल पुनरावृत्ति मात्र है। वास्तव में हम यह नहीं चाहते हैं कि राज्य-परिषद् के दो सभापति हों। अत: खण्ड (1) को निकाल देना चाहिये या दोनों खण्डों को पृथक् कर दिया जाये और खण्ड (1) को अनियमित घोषित कर दिया जाये। मैं आशा करता हूं कि माननीय डा. अम्बेडकर इस बात पर विचार करेंगे और यह देखेंगे कि क्या हमें एक ही बात को दो बार रखना चाहिये।

***मि. तजम्मुल हुसैन:** श्रीमान्, श्री नजीरुद्दीन चाहते हैं कि ''किसी अन्य सदस्य'' शब्दों के स्थान में "किसी सदस्य'' शब्द होने चाहियें। मैं इस बात का विरोध करता हूं। मेरा तर्क यह है: अनुच्छेद 73 का खण्ड (2) इस प्रकार है:

> ''राज्य-परिषद् यथासम्भव शीघ्र, अपने किसी सदस्य को अपना उपसभापित चुनेगी और जब-जब उपसभापति का पद रिक्त होगा तब-तब परिषद् किसी अन्य सदस्य को अपना उपसभापति चुनेगी।''

बात यह है। मान लीजिये किसी कारणवश उपसभापति को अपने पद से अलग कर दिया जाता है तो यदि शब्द ''अन्य'' वहां पर रहता है तब तो परिषद् उसे नहीं चुन सकती है किसी और सदस्य को ही चुनेगी। इसीलिये ''अन्य'' शब्द वहां रखा गया है। जब एक उपसभापति पद त्याग कर देता है या उसकी ओर आगे आवश्यकता नहीं समझी जाती है और यदि वह अलग कर दिया जाता है तो हम उसको फिर नहीं रख सकते हैं—दूसरे सदस्य का निर्वाचन करना ही पड़ेगा। यदि आप ''किसी सदस्य'' शब्दों को वहां रखते हैं तो परिषद् उसी सदस्य को फिर से चुन सकती है। इसलिये ''किसी सदस्य'' शब्दों की अपेक्षा ''किसी अन्य सदस्य'' शब्द वहां पर अधिक उपयुक्त, अधिक ठीक तथा अधिक सुन्दर हैं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता हूं कि श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा पेश किया गया संशोधन पूर्णतया मूर्खतापूर्ण है और यह खण्ड जिस बात से सम्बन्ध रखता है उसके प्रति पूर्ण मिथ्या धारणा पर यह संशोधन आश्रित है। ऐसा प्रतीत होता है कि वे यह भी नहीं समझ सकते हैं कि उसी पद के लिये किसी व्यक्ति के पुनर्निर्वाचन में और नवीन निर्वाचन में अन्तर

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

है। अनुच्छेद 73 में हम जिस बात पर विचार कर रहे हैं वह पुनर्निर्वाचन के सम्बन्ध में नहीं है वरन् नव-निर्वाचन के सम्बन्ध में है। अनुच्छेद 74 में उल्लिखित परिस्थितियों के कारणवश पद रिक्त होने के फलस्वरूप यह तो एक नव-निर्वाचन है। अनुच्छेद 74 के कारणों द्वारा वह व्यक्ति सभा का सदस्य रहता और यह स्पष्ट है कि सभा का सदस्य न रहने पर आप यह नहीं कह सकते हैं कि आप एक ऐसा 'सदस्य' निर्वाचित करें जो वही व्यक्ति हो जिसने पहले पद धारण किया था। अत: इस सम्भावना की पूर्ति के लिये उपयुक्त शब्द ''किसी अन्य सदस्य'' ही है क्योंकि अनुच्छेद 74 के अन्तर्गत वह सदस्य तो निर्योग्य हो गया। इसलिये अनुच्छेद 73 की शब्दावली बिल्कुल ठीक है। यहां मैं यह कहूंगा कि यदि अवधि अवसान के कारण कोई सदस्य नहीं रहता है तो उसका फिर निर्वाचन हो सकता है क्योंकि वह ''अन्य सदस्य'' है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 73 के खण्ड (2) में 'another member' (किसी अन्य सदस्य) शब्दों के स्थान में 'a member' (किसी सदस्य) शब्द रखे जायें।''

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 73 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 73 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

---

## अनुच्छेद 74

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 74 विचार-विमर्श के लिये है। संशोधन संख्या 1503 एक-दूसरे अनुच्छेद द्वारा, जो अस्वीकृत हो चुका है, आच्छादित हो जाता है।

*(संशोधन संख्या 1504 से 1508 तक पेश नहीं किये गये।)*

***अध्यक्ष:** चूंकि अनुच्छेद 74 पर कोई संशोधन नहीं है अत: मैं सभा का उस पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 74 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 74 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

## अनुच्छेद 75

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 75 विचार-विमर्श के लिये है।

*(संशोधन संख्या 1509, 1510 और 1511 पेश नहीं किये गये।)*

संशोधन संख्या 1511 पर एक संशोधन है। चूंकि संशोधन संख्या 1511 पेश नहीं किया गया। अतः यह संशोधन भी नहीं आता है।

प्रस्तव यह है:

''कि अनुच्छेद 75 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 75 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

***अध्यक्षः** सूची 2 में संशोधन संख्या 28 पर एक नये अनुच्छेद 75-क की सूचना है।

---

## नवीन अनुच्छेद 75-क

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 75 के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:—

'75-A. At any sitting of the Council of States, while any resolution for the removal of the Vice-President from his office is under consideration the Chairman or while any resolution for the removal of the Deputy Chairman from his office is under consideration, the Deputy Chairman, shall not, though he is present, preside and the provisions of clause (2) of the last preceding article shall apply in relation to every such sitting as they apply in relation to a sitting from which the Chairman or, as the case may be the Deputy Chairman, is absent.' ''

(75-क. राज्य-परिषद् की किसी बैठक में जबकि उपाध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई प्रस्ताव विचारार्थ है तो सभापति अथवा जबकि उपसभापति को उसके पद से हटाने का कोई प्रस्ताव विचारार्थ है तो उपसभापति, चाहे वह उपस्थित ही हो, तो भी अध्यक्ष का पद ग्रहण नहीं करेगा और ऐसी प्रत्येक बैठक में अन्तिम पूर्ववर्त्ती अनुच्छेद के खण्ड (2) के प्रावधान उसी रूप में लागू होंगे जिस रूप में वे उस बैठक में लागू होते हैं जिसमें सभापति या उपसभापति, जैसी भी स्थिति हो, अनुपस्थित होते हैं।)

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

श्रीमान्, इस नवीन अनुच्छेद के लिये यह कारण है कि सभापति अथवा उपसभापति के विरुद्ध उनको हटाने के लिये कार्यवाही की जाते समय सभापति अथवा उपसभापति अपने ऊपर लगाये गये दोषारोपों का उत्तर देने के लिये उपस्थित हो भी सकते हैं, उसकी उपस्थिति में, यदि यह विशेष रूप से नहीं कहा जाता है कि वह अध्यक्ष पद को ग्रहण नहीं करेंगे तो सभापति को और उसकी अनुपस्थिति में उपसभापति को अध्यक्ष पद-ग्रहण करना होगा। इस विशेष कठिनाई को दूर करने के लिये इस नवीन अनुच्छेद को पेश किया जाता है।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): मैं कुछ नहीं सुन पाता हूं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यह संशोधन उन पारिभाषिक कठिनाइयों को दूर करने के लिये पेश किया जा रहा है जो राज्य-परिषद् के सभापति अथवा उपसभापति के, जैसी भी स्थिति हो, विरुद्ध कार्यवाही करने की दशा में उन्नत होंगी। अनुच्छेद स्वयं ही व्याख्यात्मक है और जिस कठिनाई को दूर करने का उसमें प्रयास किया गया है वह किसी भी सदस्य को उस अनुच्छेद के पढ़ने पर स्पष्ट हो जायेगा।

***श्री एच.वी. कामत:** उपाध्यक्ष महोदय, मैं समझता हूं कि सभा के समक्ष जो अनुच्छेद पेश किया गया है उसमें एक कमी है। कमी इस कारण आ गई है कि अनुच्छेद में केवल यही कहा गया है कि जब सभापति अथवा उपसभापति को पद से हटाने का विषय विचाराधीन है तो वह अध्यक्ष-पद-ग्रहण नहीं करेगा। जब तक यह अनुच्छेद इस बात की विशिष्ट रूप से व्यवस्था नहीं करता है, जब तक यह अनुच्छेद इतने शब्दों में इस बात को स्पष्ट रूप से निर्धारित नहीं करता है, कि ऐसे अवसरों पर कोई अन्य व्यक्ति, चाहे वह सभा में से हो अथवा सभा के बाहर का हो, अध्यक्ष पद को ग्रहण करेगा तब तक मेरे विचार से यह अनुच्छेद अपने वर्तमान रूप में अपने आशय तथा अर्थ को स्पष्ट नहीं कर सकता है। साथ-साथ इस अनुच्छेद में यह भी होना चाहिये कि सभा ऐसे अवसरों पर अध्यक्ष-पद-ग्रहण करने के लिये अपने में से किसी व्यक्ति को चुनेगी अथवा किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त करेगी। अन्यथा इसका अर्थ यह होगा कि जब सभापति को हटाने का विषय विचाराधीन है और सभापति अध्यक्ष-पद-ग्रहण नहीं करेगा तो फिर कौन अध्यक्ष-पद-ग्रहण करेगा? मैं समझता हूं कि सभा द्वारा इस अनुच्छेद के स्वीकार किये जाने के पूर्व इस कमी को दूर कर देना चाहिये। जिस रूप में यह अनुच्छेद है इसमें सभा द्वारा यह स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** उपाध्यक्ष महोदय, जैसा कि श्री कामत ने बताई है वैसी कठिनाई उत्पन्न होने की कोई सम्भावना नहीं है और मैं निवेदन करता हूं कि इस अनुच्छेद में कोई कमी नहीं है। स्थिति यह होगी: यदि यह कहा जाये कि जब सभापति पर मुकदमा चलाया जा रहा होगा—मैं प्रचलित पदावली का प्रयोग कर रहा हूं—तो चाहे वह उपस्थित ही हो, उपसभापति अध्यक्ष-पद ग्रहण करेगा और जब उपसभापति पर मुकदमा चलाया जायेगा तो सभापति अध्यक्ष-पद ग्रहण करेगा; और जब उपसभापति पर मुकदमा चलाया जा

रहा होगा और यदि अध्यक्ष-पद ग्रहण करने के लिये सभापति उपस्थित नहीं है तो नये खण्ड में यह कहा गया है कि उस समय अनुच्छेद 75 का खण्ड (2) लागू होगा। अनुच्छेद 75 के खण्ड (2) में यह कहा गया है कि ''राज्य-परिषद् की किसी बैठक में, सभापति की अनुपस्थिति में उपसभापति, यदि वह भी अनुपस्थित है तो, ऐसा व्यक्ति, जिसका परिषद् की कार्यप्रणाली के नियमों से निश्चय किया जा सके, अथवा यदि ऐसा कोई व्यक्ति उपस्थित नहीं है तो, अन्य व्यक्ति जिसे परिषद् निश्चय करे, सभापति के रूप में कार्य करेगा''। अतः इस नये अनुच्छेद 75-क से सम्बन्धित दशा में अनुच्छेद 75 के खण्ड (2) के प्रयोग द्वारा यह कठिनाई दूर हो जाती है।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 75 के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

'75-A. At any sitting of the Council of States, while any resolution for for the removal of the Vice-President from his office is under consideration, the Chairman, or while any resolution for the removal of the Deputy Chairman from his office is under consideration, the Deputy Chairman, shall not, though he is present, preside, and the provisions of clause (2) of the last preceding article shall apply in relation to every such sitting as they apply in relation to a sitting from which the Chairman or, as the case may be, the Deputy Chairman, is absent.' ''

(75-क. राज्य-परिषद् की किसी बैठक में जबकि उपाध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई प्रस्ताव विचारार्थ है तो सभापति, अथवा जब उपसभापति को उसके पद से हटाने का कोई प्रस्ताव विचारार्थ है तो उपसभापति, चाहे वह उपस्थित ही हो, तो भी अध्यक्ष का पद ग्रहण नहीं करेगा और ऐसी प्रत्येक बैठक में अन्तिम पूर्ववर्त्ती अनुच्छेद के खण्ड (2) के प्रावधान उसी रूप में लागू होंगे जिस रूप में वे उस बैठक में लागू होते हैं जिसमें सभापति या उपसभापति, जैसी भी स्थिति हो, अनुपस्थित होते हैं।)

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 75-क विधान में प्रविष्ट किया गया।*

---

## अनुच्छेद 76

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 76 विधान का अंग बने।''

*(संशोधन संख्या 1512 पेश नहीं किया गया।)*

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1513, 1514 और 1515 सबके सब शाब्दिक हैं और इसलिये उनको पेश करने की आज्ञा नहीं दी जाती है।

संशोधन संख्या 1516 मि. नजीरुद्दीन द्वारा।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं नियमित रूप से इस संशोधन को पेश करना नहीं चाहता हूं, पर मैं कुछ बात कहना चाहता हूं। मेरे एक ऐसे ही संशोधन को डा. अम्बेडकर ने बड़ी कृपा करते हुए मूर्खतापूर्ण बता दिया था। श्रीमान्, मैं निवेदन करता हूं कि मेरा संशोधन मूर्खतापूर्ण नहीं था। अब भी उस विषय पर मसौदा-समिति में पुनर्विचार करने का समय है। मैं सभा से यह निवेदन करना चाहता था कि यदि सदस्य न रहने पर अथवा पद त्याग करने पर उपसभापति अपने स्थान को रिक्त कर देता है और यदि सदस्य के रूप में उसका पुनर्निर्वाचन हो जाता है तो उसे चुनाव लड़ने से नहीं रोकना चाहिये। कठिनाई केवल अनुच्छेद 74 के खण्ड (ग) में है। मैं समझता हूं कि यह बड़ा सारवत् विषय है कि यदि उपसभापति अपने पद से हट जाता है परन्तु यदि उसका पुनर्निर्वाचन हो जाता है तो उसको चुनाव लड़ने से नहीं रोकना चाहिये। इस बात की मैं सभा को सूचना देना चाहता था। सभा स्वयं इसका विरोध प्रकट कर ही चुकी है अत: मैं इसे पेश नहीं करना चाहता हूं। मैं केवल यह निवेदन करता हूं कि वह संशोधन मूर्खतापूर्ण नहीं है वरन् बहुत ही युक्तियुक्त है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** हम उस संशोधन पर विचार कर चुके हैं और ऐसा ही एक संशोधन मेरे माननीय मित्र ने अनुच्छेद 73 पर पेश किया था।

***अध्यक्ष:** उसको निपटाया जा चुका है। अनुच्छेद 76 पर कोई संशोधन नहीं है।

*(संशोधन संख्या 1517 और 1518 पेश नहीं किये गये।)*

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 76 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 76 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

---

## अनुच्छेद 77

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 77 विधान का अंग बने।''

*(संशोधन संख्या 1519, 1520 और 1521 पेश नहीं किये गये।)*

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 77 के खण्ड (ख) में 'to the Deputy Speaker' शब्दों के स्थान में 'to the President' शब्द रखे जायें।''

मेरा यह संशोधन केवल कार्यप्रणाली के विषय से सम्बन्ध रखता है। मैं समझता हूं कि जब लोक सभा का सभापति अपना पद त्याग देता है तो यह अधिक अच्छा होगा कि वह अपना त्याग पत्र अध्यक्ष को, न कि उपसभापति को, सम्बोधित करे क्योंकि उपसभापति उसके नीचे का पद धारण करता है।

गौरव की किसी झूठी भावना से प्रेरित होकर मैं यह नहीं कह रहा हूं। परन्तु ऐसे तथा अन्य विषयों में, मैं यह कहूंगा कि शिष्टाचार तथा विशिष्ट अवसर की अनुकूलता के अनुसार कार्यप्रणाली को अनियमित करना चाहिये और इसलिये मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जब आपने यह व्यवस्था की है कि जब उपसभापति को भेजना चाहिये तो मैं समझता हूं कि यह ठीक होगा कि सभापति अपने त्याग पत्र को भारतीय संघ के अध्यक्ष को सम्बोधित करे न कि उपसभापति को। मैं आशा करता हूं और मुझे विश्वास है कि डा. अम्बेडकर इस प्रकार की कार्यप्रणाली के औचित्य की ओर ध्यान देंगे और मेरे इस संशोधन को स्वीकार करेंगे जिसमें यह व्यवस्था की गई है कि सभापति के पद त्याग करने पर उसका त्याग पत्र अध्यक्ष को सम्बोधित किया जायेगा न कि उपसभापति को। श्रीमान्, मैं अपने नाम के संशोधन संख्या 1522 को पेश करता हूं और सभा की स्वीकृति के लिये प्रस्तुत करता हूं।

*(संशोधन संख्या 1523 और 1524 पेश नहीं किये गये।)*

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** संशोधन संख्या 1525 शाब्दिक है।

***अध्यक्षः** मैंने भी ऐसा ही सोचा था।

*(संशोधन संख्या 1526, 1527 और 1528 पेश नहीं किये गये।)*

मैं समझता हूं कि ये सब संशोधन अनुच्छेद 77 पर हैं। इस अनुच्छेद पर तो केवल एक ही संशोधन पेश किया गया है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन का मैं विरोध करना चाहता हूं। मुझे ऐसा लगता है कि वे यह भूल गये कि अध्यक्ष अधिशासी प्रमुख है और हम यह चाहते हैं कि सभापति तथा उपसभापति अधिशासी मण्डल से पूर्णतया स्वतंत्र रहे, अतः जबकि यह व्यवस्था की गई है कि सभापति उपसभापति को अपना त्याग पत्र देगा तो उसका अर्थ यही है कि सभापति तथा सभा जिसका वह सभापति है दोनों की स्वतंत्रता की रक्षा की गई है। यदि हम प्रधान को त्याग पत्र देते हैं तो इसका अर्थ यह है कि हम अधिशासी मण्डल को त्याग पत्र दे रहे हैं। यह बड़ा ही लाभदायक सिद्धांत है कि सभापति तथा उपसभापति अधिशासी मंडल से पूर्णतया स्वतंत्र रहें। अतः मैं आशा करता हूं कि श्री कामत अपने संशोधन पर जोर नहीं देंगे।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** अध्यक्ष महोदय, मैं अपने माननीय मित्र श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन का समर्थन करता हूं और मैं समझता हूं कि जब सभापति पद त्याग करना चाहता है तो वह अपने त्यागपत्र को किसी ऐसे अधिकारी के पास न भेजे जो उसके अधीन कार्य कर रहा हो वरन् किसी अपने से ऊंचे अधिकारी के अर्थात् गणराज्य के अध्यक्ष के पास भेजे। श्रीमान्, मैं समझता हूं कि सभा के गौरव के लिये यह अधिक अच्छा होगा। मेरे माननीय मित्र प्रो. सक्सेना ने यह कहा है कि वे सभा के गौरव की रक्षा करना चाहते हैं। लोक सभा कई रूपों में अध्यक्ष से सम्बन्धित है और आप इनको एक-दूसरे से पृथक नहीं कर सकते हैं, ऐसा करना असम्भव है और फिर गणराज्य का अध्यक्ष तो, श्रीमान्, कानूनन लोक सभा का प्रमुख है। ये दो ही तो प्रमुख हैं और यह वास्तव में सही तथा ठीक है कि जब वह पद त्याग करना चाहे तो अपने अधीन अधिकारी को त्यागपत्र देने की अपेक्षा वह सर्वोच्च धर्माधिकरण अर्थात् अध्यक्ष को त्यागपत्र दे। इन शब्दों के साथ अपने माननीय मित्र श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन का मैं समर्थन करता हूं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मुझे खेद है कि अपने माननीय मित्र श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन को मैं स्वीकार नहीं कर सकता हूं। वर्तमान अनुच्छेद एक बड़े ही सरल सिद्धांत पर आश्रित है और वह यह है कि सामान्यतया कोई व्यक्ति उस व्यक्ति को त्यागपत्र देता है जो उसे नियुक्त करता है। सभापति तथा उपसभापति वे व्यक्ति हैं जो सभा द्वारा नियुक्त किये जाते हैं या चुने जाते हैं या निर्वाचित किये जाते हैं। अतः ये दोनों व्यक्ति यदि पद त्याग करना चाहते हैं तो इन्हें सभा को अपना त्यागपत्र देना चाहिये जिसने इन्हें नियुक्त किया है। सभा एक सामूहिक लोक संस्था होने के कारण त्यागपत्र सभा के प्रत्येक सदस्य को पृथक्-पृथक् सम्बोधित नहीं किया जा सकता है। अतः यह प्रावधान रखा गया है कि त्यागपत्र या तो सभापति को सम्बोधित किया जाये या उपसभापति को, क्योंकि वे ही इस सभा का प्रतिनिधान करते हैं। सच बात तो यह है कि सिद्धांत रूप में त्यागपत्र सभा के लिये है क्योंकि सभा ही उनको नियुक्त करती है। अध्यक्ष वह व्यक्ति नहीं है जिसने उन्हें नियुक्त किया हो। अतः यह बहुत ही असंगत होगा कि उपसभापति अथवा सभापति अपने त्यागपत्र अध्यक्ष को दे जिसका सभा से कोई सम्बन्ध नहीं है और जिसे इस सभा से इस कारण कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये कि सभा अधिशासी प्राधिकार से स्वतंत्र रह सके चाहे उस अधिकार का प्रयोग अध्यक्ष द्वारा हो या उस समय की सरकार द्वारा हो।

***श्री एच.वी. कामतः** एक सूचना सम्बन्धी प्रश्न है, क्या मैं डा. अम्बेडकर से यह जान सकता हूं कि वर्तमान समय में केन्द्रीय विधान-सभा के सभापति के सम्बन्ध में क्या कार्यप्रणाली प्रचलित है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** वर्तमान समय में तो स्थिति बहुत भिन्न है। क्या वे वर्तमान स्थिति के सम्बन्ध में जानना चाहते हैं या उस स्थिति के सम्बन्ध में जानना चाहते हैं जिसे वे पैदा करना चाहते हैं? भारतीय सरकार के अधिनियम के अन्तर्गत सभा और सभापति गवर्नर-जनरल के ही बनाये हुए हैं। अतः सभापति को अपना त्यागपत्र गवर्नर-जनरल को ही देना है। हम उस स्थिति को कायम रखना नहीं चाहते हैं। हम अध्यक्ष

को इतनी पूर्ण तथा अधिशासी मण्डल से इतनी स्वतंत्र स्थिति प्रदान करना चाहते हैं जितनी यथासम्भव हम प्रदान कर सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या भारतीय सरकार के अधिनियम के अनुसार सभापति का निर्वाचन सभा द्वारा नहीं किया जाता है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** यह बात गलत है। इसमें सन्देह नहीं है कि उसका निर्वाचन किया जाता है; पर उसके निर्वाचन की स्वीकृति गवर्नर-जनरल द्वारा की जाती है।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मैं अपने संशोधन को वापस करने की अनुमति चाहता हूं।

*परिषद् की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।*

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 77 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 77 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

---

## अनुच्छेद 78

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 78 विधान का अंग बने।''

*(संशोधन संख्या 1529 और 1530 पेश नहीं किये गये।)*

संशोधन संख्या 1530 पर संशोधन उत्पन्न ही नहीं होता है क्योंकि स्वयं संशोधन ही पेश नहीं किया गया है।

*(संशोधन संख्या 1531 पेश नहीं किया गया।)*

अनुच्छेद 78 पर कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 78 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 78 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

---

## नया अनुच्छेद 78-क

***अध्यक्ष:** श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा एक नवीन अनुच्छेद 78-क बढ़ाने के लिये एक संशोधन की सूचना है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 78 के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:—

'78-A. At any sitting of the House of the People, while any resolution for the removal of the Speaker from his office is under consideration, the Speaker, or while any resolution for the removal of the Deputy Speaker from his office is under consideration, the Deputy Speaker, shall not, though he is present, preside and the provisions of clause (2) of the last preceding article shall apply in relation to every such sitting as they apply in relation to a sitting from which the Speaker or, as the case may be, the Deputy Speaker, is absent.' ''

(78-क. राज्य-परिषद् की किसी बैठक में जबकि अध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई प्रस्ताव विचारार्थ है तो अध्यक्ष और जबकि उपाध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई प्रस्ताव विचारार्थ है तो उपाध्यक्ष, चाहे वह उपस्थित ही हो तो भी, सभापति का पद ग्रहण नहीं करेगा और अन्तिम पूर्ववर्त्ती अनुच्छेद के खण्ड (2) के प्रावधान ऐसी प्रत्येक बैठक में उसी रूप में लागू होंगे जिस रूप में वे उस बैठक में लागू होते हैं जिसमें अध्यक्ष या उपाध्यक्ष, जैसी भी स्थिति हो, अनुपस्थित है।)

श्रीमान्, इस नये अनुच्छेद का विषय ठीक वही है जो अनुच्छेद 75-क का है जिसको सभा ने बड़ी उदारतापूर्वक स्वीकार कर लिया है। इस अनुच्छेद की आवश्यकता को माननीय डा. अम्बेडकर ने पूर्ण रूप से समझा दिया है। मैं आशा करता हूं इस नवीन अनुच्छेद को स्वीकार करने में सभा को कोई कठिनाई नहीं होगी क्योंकि यह उसी रूप में लोक सभा से सम्बन्ध रखता है जिस रूप में अनुच्छेद 75-क राज्य-परिषद् से सम्बन्ध रखता है।

श्रीमान्, मैं इस प्रस्ताव को पेश करता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं इस संशोधन पर दम मत लेता हूं क्योंकि यह वैसा ही है जैसा कि एक पूर्ववर्त्ती अनुच्छेद है जिसे हम स्वीकार कर चुके हैं। अन्तर यह है कि यह अनुच्छेद लोक सभा के सम्बन्ध में है और पूर्ववर्त्ती राज्य-परिषद् के सम्बन्ध में है। मैं समझता हूं कि इस पर ओर आगे वाद-विवाद की आवश्यकता नहीं है।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 78 के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

'78-A. At any sitting of the House of the People, while any resolution for the removal of the Speaker from his office is under consideration, the Speaker, or while any resolution for the removal of the Deputy Speaker from his office is under consideration, the Deputy Speaker, shall not, though he is present, preside and the provisions of clause (2) of the last preceding article shall apply in relation to every such sitting as they apply in relation to a sitting from which the Speaker or, as the case may be, the Deputy Speaker, is absent.' ''

(78-क. राज्य-परिषद् की किसी बैठक में जबकि अध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई प्रस्ताव विचारार्थ है तो सभापति और जबकि उपाध्यक्ष का उसके पद से हटाने का कोई प्रस्ताव विचारार्थ है तो उपाध्यक्ष, चाहे वह उपस्थित ही हो तो भी, सभापति का पद ग्रहण नहीं करेगा और अन्तिम पूर्ववर्त्ती अनुच्छेद के खण्ड (2) के प्रावधान ऐसी प्रत्येक बैठक में उसी रूप में लागू होंगे जिस रूप में वे उस बैठक में लागू होते हैं जिसमें अध्यक्ष या उपाध्यक्ष, जैसी भी स्थिति हो, अनुपस्थित है।)''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 78-क विधान में प्रविष्ट किया गया।*

---

## अनुच्छेद 79

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 79 विधान का अंग बने।''

*(संशोधन संख्या 1532, 1533 और 1534 पेश नहीं किये गये।)*

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 79 पर कोई संशोधन नहीं है।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 79 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 79 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

## नवीन अनुच्छेद 74 क

***अध्यक्षः** एक अनुच्छेद 79-क है जिसकी सूचना डा. अम्बेडकर और श्री घनश्याम सिंह गुप्त ने दी है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं इसे स्थगित रखना चाहूंगा।

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 79-क स्थगित रखा जाता है। एक और अनुच्छेद 79-क है जिसकी सूचना मि. नजीरुद्दीन अहमद ने दी है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 79 के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:—

''79-A. (1) The Chairman shall preside at a meeting of the Council of States, and in his absence, the Deputy Chairman shall preside; and in his absence, any one of the panel of Chairmen appointed by the Chairman and selected by him for the purpose shall preside; and in their absence any member of the Council of States elected by the Council shall preside.

(*2*) At a meeting of the House of the People the Speaker shall preside, and in his absence, the Deputy Speaker shall preside, and in his absence a member of the panel of Chairmen appointed by the Speaker and selected by him for the purpose, and in their absence, any member elected by the House shall preside.

(*3*) At a joint...' ''

''(79-क. (1) राज्य-परिषद् की बैठक में राज्य-परिषद् का सभापति सभापति का आसन ग्रहण करेगा और उसकी अनुपस्थिति में उपसभापति सभापति का आसन ग्रहण करेगा; और उपसभापति की अनुपस्थिति में सभापति द्वारा नियुक्त सभापतियों की तालिका में से कोई एक व्यक्ति जिसको इस प्रयोजन के लिये सभापति द्वारा चुना जाये, वह सभापति का आसन ग्रहण करेगा; और उनकी अनुपस्थिति में परिषद् द्वारा निर्वाचित परिषद् का कोई भी सदस्य सभापति का आसन ग्रहण करेगा।

(2) लोक सभा की बैठक में अध्यक्ष सभापति का आसन ग्रहण करेगा, और उसकी अनुपस्थिति में उपाध्यक्ष सभापति का आसन ग्रहण करेगा और उसकी अनुपस्थिति में अध्यक्ष द्वारा नियुक्त सभापतियों

की तालिका में से कोई एक व्यक्ति जिसको इस प्रयोजन के लिये अध्यक्ष द्वारा चुना जाये वह सभापति का आसन ग्रहण करेगा; और उनकी अनुपस्थिति में लोक सभा द्वारा निर्वाचित कोई सदस्य सभापति का आसन ग्रहण करेगा।

(3) संयुक्त बैठक में...।''

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान्, इसकी व्यवस्था अनुच्छेद 75 में हो चुकी है।

***अध्यक्ष:** खण्ड (1) और (2) तो अनुच्छेद 75 और 78 में आ चुके हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** उस दशा में मैं खण्ड (3) को पेश करूंगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** खण्ड (3) की भी व्यवस्था हो चुकी है।

***अध्यक्ष:** खण्ड (3) अनुच्छेद 98 (4) में आ जाता है। यदि आप अपने संशोधन पेश करना ही चाहते हैं तो इन्हें आप उस समय ले सकते हैं। वह उपयुक्त स्थिति होगी।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** परन्तु दुहरे प्रावधान आज इस सभा द्वारा स्वीकार किये जा चुके हैं।

---

## अनुच्छेद 80

***अध्यक्ष:** मुझे यह बात याद है। उसका दुहराना आवश्यक नहीं है। हम यह समझ लेते हैं कि वह संशोधन पेश नहीं हुआ है। हम अनुच्छेद 80 को लेते हैं।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 80 विधान का अंग बने।''

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 80 के खण्ड (1) में 'Save as provided in this Constitution' (इस विधान में प्रावहित अवस्था को छोड़कर) शब्दों के स्थान में 'Save as otherwise provided in this Constitution' (इस विधान में इसके विपरीत प्रावहित अवस्था को छोड़कर) शब्द रखे जायें।''

श्रीमान्, यह केवल एक भूल है और इसको ठीक करना पड़ेगा।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1537। मैं यह विचार करता हूं कि यह मसौदा बनाने से सम्बन्ध रखता है। संशोधन संख्या 1538। श्री कामत यह उस संशोधन में आ जाता है जिसको अभी पेश किया जा चुका है।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, इसका दूसरा भाग तो नवीन है।

***अध्यक्षः** हां, आप दूसरा भाग पेश कर सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, सर्वप्रथम मैं आपको यह सूचना दूं कि मैंने पांच संशोधन अलग-अलग भेजे थे परन्तु उनको मिला दिया गया है, तीन जो एक संशोधन संख्या 1538 में मिला दिये गये हैं और दो संशोधन संख्या 1541 में। किसी रूप में मैं कार्यालय पर दोषारोपण करना नहीं चाहता हूं। कार्यालय बहुत अधिक परिश्रम कर रहा है और यह सम्भव हो सकता है कि काम की अधिकता के कारण ऐसा हो गया है। मैं आप से यह विनय करूंगा कि इस संशोधनों को अलग-अलग पेश करने दिया जाये।

***अध्यक्षः** बहुत अच्छा।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं संशोधन संख्या 1538 के अन्तिम दो भागों को ही पेश करूंगा तथा आपकी अनुमति से 1541 को भी पेश करूंगा क्योंकि यह उसी खण्ड से ही सम्बन्ध रखता है।

***अध्यक्षः** जी हां।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> ''कि अनुच्छेद 80 के खण्ड (1) में 'at any sitting' शब्दों के पश्चात् 'of either House' शब्द प्रविष्ट किये जायें और 'other than the Chairman or Speaker or person acting as such' (सभापति अथवा अध्यक्ष अथवा इनके स्थानापन्न व्यक्ति को छोड़कर) शब्द निकाल दिये जाये।''

> ''कि अनुच्छेद 80 के खण्ड (1) के दूसरे पैरा में 'The Chairman' (सभापति) शब्द के पूर्व 'Provided that' (परन्तु) शब्द प्रविष्ट किया जायें''

मैं संशोधन संख्या 1541 के दूसरे भाग को पेश नहीं कर रहा हूं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** क्या मैं यह संकेत करूं कि यह सभा अनुच्छेद 68-क को स्वीकार कर ही चुकी है जो ठीक वैसा ही है जैसा कि यह संशोधन है जिसको श्री कामत ने पेश करने का प्रयास किया है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** कल हमने अनुच्छेद 68-क स्वीकार किया था जिसमें यही बातें थीं।

***अध्यक्षः** वह 1538 और 1541 के प्रथम भाग को ले रहा है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मुझे खेद है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मैं सुझाव करता हूं कि श्री कामत इनको अलग-अलग पेश करें। हम एक का समर्थन करना चाहेंगे और दूसरे का विरोध।

***श्री एच.वी. कामतः** 1538 और 1541 दोनों साथ-साथ हैं, अन्यथा बात पूरी नहीं होगी। यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो अनुच्छेद इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

> ''Save as otherwise provided in this Constitution, all questions at any sitting of either House or joint sitting of the Houses shall be determined by a majority of votes of the members present and voting.
>
> Provided that the Chairman or Speaker etc.''
>
> (इस विधान में इसके विपरीत प्रावहित अवस्था को छोड़कर, दोनों आगारों में से किसी आगार की बैठक में अथवा आगारों की संयुक्त बैठक में सब प्रश्नों का निश्चयन उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों के बहुमत से किया जायेगा।
>
> परन्तु सभापति अथवा अध्यक्ष इत्यादि।)

मैं इस संशोधन पर विस्तारपूर्वक नहीं बोलना चाहता हूं। मैं समझता हूं कि ये संशोधन बहुत ही स्पष्ट हैं क्योंकि पहले संशोधन में ''दोनों आगारों में से किसी आगार की'' शब्द बढ़ाने का प्रयास किया गया है। यह बात युक्तियुक्त है कि हम हर एक बात को स्पष्ट कर दें। उसके बाद में ही एक दूसरा खण्ड है जो आगारों की संयुक्त बैठक के सम्बन्ध में है।

अन्य दो संशोधनों के सम्बन्ध में, जिनको मेरे विचार से या तो साथ-साथ स्वीकार करना चाहिये या साथ-साथ अस्वीकार कर देना चाहिये, मैं केवल यही कहूंगा कि कभी-कभी मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस विधान के मसौदे में निरर्थक शब्द समूह भर दिये हैं जिनकी संख्या कम की जा सकती थी और बहुत से शब्दों को हटाया जा सकता था। मैं यह जानता हूं कि हाथी हमारा एक प्रतीक अवश्य है पर मुझे विश्वास है कि सभा इस बात से सहमत नहीं है कि हम विधान को भद्दा तथा बेकाबू बनायें। हमारे ऋषि मुनियों ने विज्ञान और वेदान्त को सूक्ष्म सूत्रों में लिखा है और हमारे एक महान् व्यक्ति को, मेरे विचार से स्वयं व्यासजी को अपने इस श्लोक का गौरव है जिसमें उन्होंने कहा–

''श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रंथ-कोटिभिः''

(आधे दोहे में कहूं, कोटि ग्रन्थ का सार।)

परन्तु यहां हम उन शब्दों को बार-बार रख रहे हैं जो नितान्त अनावश्यक हैं और जो सरलता से अर्थ का अनर्थ किये बिना या अनुच्छेद के यथार्थ बोध का ह्रास किये बिना हटाये जा सकते थे। मैं चाहता हूं कि हमारा विधान बहुत अधिक न्यून आकार का होता। अभी उस दिन मेरे कुछ मित्रों ने, जो एक कालेज के छात्र हैं और राजनीति विषय के विद्यार्थी हैं, विधान के मसौदे को पढ़ने के पश्चात् मुझे लिखा था—उन्होंने कुछ विनोद में और कुछ सच्ची बातों के रूप में लिखा था कि भविष्य में होने वाले विद्यार्थी हम में से अनेकों को कोसेंगे जिन्होंने देश के लिये इतना बढ़ा विधान बनाया है।

***अध्यक्ष:** क्या इस संशोधन के लिये यह सब आवश्यक है?

***श्री एच.वी. कामत:** मैं केवल अपनी बात को स्पष्ट करना चाहता था। मैं अब सीधा अपनी बात पर आता हूं क्योंकि आपने यह कहा कि यह सब संशोधन के लिये आवश्यक नहीं है। मैं केवल यही कहना चाहता हूं कि अनुच्छेद 80 के खण्ड (1) में हम देखते हैं कि ये शब्द ''सभापति अथवा अध्यक्ष अथवा इनके स्थानापन्न व्यक्ति'' पहले तथा दूसरे दोनों पैरों में रखे गये हैं। पहले पैरे में ''सभापति अथवा अध्यक्ष इत्यादि'' शब्दों के समाविष्ट किये बिना भी अर्थ बिल्कुल स्पष्ट है। यदि वे ''परन्तु'' जैसे किसी परादिक को प्रवष्टि कर दें तो मसौदा बनाने वालों के मन के भाव स्पष्ट रूप से आ जायेंगे और इस एक अनुच्छेद में से कम से कम 8 या 9 शब्दों के भार से हम मुक्त हो जायेंगे। यदि हम अनेकों अनुच्छेदों पर इसी रूप में विचार करें तो मुझे विश्वास है कि कम से कम एक हजार शब्द इस विधान से निकाल दिये जायेंगे।

अत: मैं संशोधन संख्या 1538 के पिछले दो-तिहाई भाग को और नं. 1541 के पूर्वाधि भाग को पेश करता हूं और सभा की स्वीकृति के लिये इनको प्रस्तुत करता हूं।

*(संशोधन संख्या 1542, 1543, 1544, 1545, 1546, 1547 और 1548 पेश नहीं किये गये।)*

***अध्यक्ष:** संशोधनों पर पेश किया गया संशोधन संख्या 87।

***आचार्य जुगलकिशोर:** (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> ''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1536 से सम्बन्धित अनुच्छेद 80 के खण्ड (1) में 'sitting' शब्द जहां जहां आय हो उसके पश्चात् 'of either House' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

यह केवल शाब्दिक परिवर्तन है और मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार कर लेगी।

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद और संशोधनों पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 80 के सम्बन्ध में मसौदा-समिति के विचार-विमर्श के लिये एक मसौदा सम्बन्धी कमी मुझे बतानी है। खण्ड (1) के पश्चात् एक पूरा का पूरा पैरा है। जिसकी खण्ड संख्या होनी चाहिये। मैं समझता हूं कि यही एक ऐसा उदाहरण है जहां एक पैरे को संख्यांकित नहीं किया गया है। इस पैरे की संख्या 1 (क) रखनी चाहिये और उत्तरवर्त्ती खण्डों को फिर से संख्यांकित करना चाहिये।

मसौदे के एक और रूप के सम्बन्ध में मसौदा-समिति के विचार-विमर्श के लिये मैं यह सुझाव करूंगा: अनुच्छेद 78, 79, 80, 81 और 82 में 'the' शब्द के साथ कुछ अधिक प्रेमपूर्ण व्यवहार किया गया है। कदाचित उसका बड़ी स्वतंत्रता के साथ प्रयोग किया

गया है। परन्तु अन्य स्थानों में 'the' शब्द से बहुत घृणा की गई है उदाहरण के रूप में अनुच्छेद 79 में 'the Chairman', 'the Deputy Chairman', the Speaker', 'the Deputy Speaker' इत्यादि पद हैं, परन्तु इसी प्रसंग में अनुच्छेद 78, 80 और 81 में 'the' शब्द नहीं दिखाई देता है। पर यह शब्द फिर अनुच्छेद 82 में दिखाई देता है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** (मद्रास : जनरल): एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान्, आपने शाब्दिक संशोधनों को अनियमित घोषित कर दिया है। क्या मेरे मित्र को इन शाब्दिक संशोधनों पर बोलने का अधिकार है? इस कार्य के सारवत् भाग को हम कर सकें, मूल कार्य में ही अपने आपको लगा सकें और समय व्यर्थ न खो सकें, इन सब प्रयोजनों के लिये ही आपने शाब्दिक संशोधनों को अनियमित घोषित किया है। फिर अन्य प्रकार से उन्हीं विषयों पर बोलकर हमारा समय लेने से क्या लाभ?

***अध्यक्षः** मैं केवल यह जानना चाहता था कि उक्त सदस्य की सहानुभूति किस ओर है, 'the' शब्द के पक्ष में अथवा विपक्ष में। इसके अतिरिक्त, मैं उक्त सदस्य से निवेदन करूंगा कि वे मसौदा-समिति के सदस्यों से विचार-विमर्श करें।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं तो अपना भाषण समाप्त कर ही चुका हूं। पर मुझे यह कहने की आज्ञा दीजिये कि इस औचित्य प्रश्न के करने में माननीय सदस्य ने जितना मैं समय लेता उसकी अपेक्षा अधिक समय लिया है। मसौदा-समिति के विचार-विमर्श के लिये मैंने केवल ये दो बातें बताईं और अपना भाषण समाप्त कर दिया।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद पर मेरी आपत्ति ''आगारों की संयुक्त बैठक'' शब्दों के प्रति है। इस विधान के मसौदे में ऐसा अनुच्छेद 88 है जो दोनों आगारों की संयुक्त बैठकों के सम्बन्ध का है। यह प्रश्न सिद्धांत का है और मैं उन लोगों में से हूं जो इस विचारधारा के हैं कि दोनों आगारों की संयुक्त बैठक न हो। अतः मैं आशा करता हूं कि चाहे यह अनुच्छेद इस समय इसी रूप में पारित कर दिय जाये जैसा की है परन्तु यदि अनुच्छेद 88 में संशोधन हो जाता है या वह गिर जाता है तो मैं आशा करता हूं कि अनुच्छेद 80 का यह भाग भी निकाल दिया जायेगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मुझे खेद है कि मैं श्री कामत के संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** मेरे किस संशोधन को? मैंने अलग-अलग तीन संशोधन पेश किये हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** वह जिसको उन्होंने अभी पेश किया है। मैं पुस्तिका में एक सम्मिलित संशोधन देखता हूं। वे उसके अलग-अलग भागों पर बोले होंगे। पर संशोधन जिस रूप में है वह केवल एक ही है।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मैंने उनको अलग-अलग भेजा था और मैं उन पर अलग-अलग बोला था। श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं उनको बता सकता हूं। सर्वप्रथम 'at any sitting' शब्दों के पश्चात् 'of either House' शब्दों को प्रविष्ट करने का संशोधन है। दूसरा संशोधन ''सभापति अथवा अध्यक्ष अथवा इनके स्थानापन्न व्यक्ति को छोड़कर'' शब्दों को हटाने के सम्बन्ध में है। तीसरा दूसरे पैरे के आरम्भ में ''परन्तु'' शब्द प्रविष्ट करने के सम्बन्ध में है। मैं यह जानना चाहूंगा कि इन तीनों संशोधनों में से माननीय सदस्य किस संशोधन को स्वीकार कर रहे हैं, क्या वे तीनों संशोधनों को अस्वीकार कर रहे हैं अथवा दो को अथवा एक को?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं माननीय सदस्य के संशोधन संख्या 1538 का उल्लेख कर रहा हूं जो जहां तक कि सरकारी प्रलेख का सम्बन्ध है—एक ही संशोधन प्रतीत होता है।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मैंने इनको अलग-अलग पेश करने की आपसे अनुमति ले ली थी।

***अध्यक्षः** श्री कामत ने तीन बातें पेश की हैं। उनको अलग-अलग लिया जा सकता है। संशोधित रूप में अनुच्छेद इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

> "Save as otherwise provided in this Constitution, all questions at any sitting of either House or joint sitting of the Houses shall be..."
>
> (इस विधान में इसके विपरीत प्रावहित अवस्था को छोड़कर दोनों आगारों में से किसी आगार की बैठक में अथवा आगारों की संयुक्त बैठक में...)

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं देखता हूं कि संशोधनों की सूची में से मैं संशोधन संख्या 87 को स्वीकार कर सकता हूं। वह मेरे प्रयोजन की पूर्ति करता है अतः मैं उसे स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** उसमें आपके संशोधन का प्रथम भाग आ जाता है। इसके पश्चात् संशोधन का दूसरा भाग है। मैं संशोधन संख्या 1536 से आरम्भ करूंगा।

प्रस्ताव यह है:

> ''कि अनुच्छेद 80 के खण्ड (1) में 'Save as provided in this Constitution' (इस विधान में प्रावहित अवस्था को छोड़कर)' शब्दों के स्थान में 'Save as otherwise provided in this Constitution' (इस विधान में इसके विपरीत प्रावहित अवस्था को छोड़कर) शब्द रखे जायें।''

*संशोधन स्वीकार किया गया।*

***अध्यक्षः** इसके पश्चात् संशोधनों पर संशोधनों की सूची में आचार्य जुगलकिशोर द्वारा पेश किये गये संशोधन संख्या 87 पर हम आते हैं।

प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधनों की सूची में संशोधन संख्या 1536 से सम्बन्धित अनुच्छेद 80 के खण्ड (1) में 'Sitting' शब्द जहां जहां आया हो उसके पश्चात् 'either House' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

*संशोधन स्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** तत्पश्चात् हम तीसरे संशोधन पर आते हैं जो श्री कामत का संशोधन है वह इस प्रभाव के लिये है:

''कि खण्ड (1) के प्रथम पैरे में से 'otherwise than the Chairman or Speaker or person acting as such' (सभापति अथवा अध्यक्ष अथवा इनके स्थानापन्न व्यक्ति को छोड़कर) शब्दों को निकाल दिया जाये और दूसरे पैरे के आरम्भ में 'Provided that' (परन्तु) शब्द, निस्सन्देह विराम-चिन्हों में आवश्यक परिवर्तन के साथ जोड़ दिया जाये।''

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् संशोधित रूप में मैं इस अनुच्छेद पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 80 विधान का अंग बने।''

*संशोधित रूप में अनुच्छेद स्वीकार किया गया।*

*संशोधित रूप में अनुच्छेद 80 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

---

## अनुच्छेद 81

***अध्यक्ष:** इसके बाद हम आगे के अनुच्छेद 81 पर आते हैं।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 81 विधान का अंग बने।''

एक संशोधन है जिसकी सूचना श्री ताहिर और श्री जफर इमाम ने दी थी। परन्तु वे यहां नहीं हैं अत: उसे पेश नहीं किया जाता है। इसके पश्चात् श्री कामत के नाम का संशोधन संख्या 1530 है।

***श्री एच.वी. कामत:** कल अनुच्छेद 68-क के स्वीकृत हो जाने के कारण वह संशोधन अब नहीं रखा जा सकता; अत: श्रीमान्, मैं उसे पेश नहीं करता हूं।

***प्रो. के.टी. शाह:** उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 81 में 'President, or some person appointed in that behalf by him' (प्रधान अथवा प्रधान द्वारा तदर्थ नियुक्त व्यक्ति) शब्दों के स्थान में 'Speaker of the House of Representatives or Chairman of the Council of States' or some person appointed in that behalf by the Speaker or the Chairman of the Council of States' (लोक सभा के अध्यक्ष अथवा राज्य-परिषद् के सभापति अथवा अध्यक्ष या राज्य-परिषद् के सभापति द्वारा तदर्थ नियुक्त व्यक्ति) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधित अनुच्छेद फिर इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

''Every member of either House of Parliament shall, before taking his seat, make and subscribe before the Speaker of the House of Representatives or Chairman of the Council of States, or some person appointed in that behalf by the Speaker or the Chairman of the Council of States, a declaration according to the form set out for the purpose in the Third Schedule.''

(संसद के प्रत्येक आगार का प्रत्येक सदस्य, अपना स्थान ग्रहण करने से पूर्व, लोक सभा के अध्यक्ष अथवा राज्य-परिषद् के सभापति अथवा अध्यक्ष या राज्य-परिषद् के सभापति द्वारा तदर्थ नियुक्त व्यक्ति, के समक्ष, तृतीय अनुसूची में इस प्रयोजन के लिये दिये हुए प्रपत्र के अनुसार घोषणा करेगा और उस पर हस्ताक्षर करेगा।)

श्रीमान्, इस संशोधन के प्रस्तुत करने में मेरा प्रयोजन यह है कि गणराज्य के प्रधान को उन कार्यों में भाग लेने से पृथक् रखा जाये जिनको मैं पूर्णतया सभा के आन्तरिक कार्य समझता हूं। इन विषयों के गणराज्य के प्रधान का कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिये। मैं समझता हूं कि सभा के आन्तरिक स्वायत्त-शासन से सम्बन्धित यह बहुत सादा सा विषय है इस कारण इस पर कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये।

श्रीमान्, मैं सभा के समक्ष अपना प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 81 में 'a declaration' (घोषणा करेगा) शब्दों के स्थान में 'an affirmation or oath' (प्रतिज्ञान करेगा अथवा शपथ लेगा) शब्द रखे जायें।''

***अध्यक्ष:** सब संशोधन पेश कर दिये गये हैं। अब इन पर वाद-विवाद हो सकता है। क्या कोई सदस्य बोलना चाहता है?

***मि. तजम्मुल हुसैनः** उपाध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र प्रो. के.टी. शाह द्वारा पेश किये गये संशोधन संख्या 1551 का विरोध करने के लिये खड़ा होता हूं। अभी तक तो यह कार्यप्रणाली है। जब सभा का निर्वाचन हो जाता है तो सभा में से किसी एक सदस्य को गवर्नर-जनरल द्वारा उनकी बैठकों में सभापति का आसन ग्रहण करने के लिये नियुक्त किया जाता है और फिर अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष का निर्वाचन होता है। श्रीमान्, अनुच्छेद 81 में यह कहा गया है कि प्रधान अथवा प्रधान द्वारा तदर्थ नियुक्त व्यक्ति के समक्ष प्रतिज्ञान अथवा शपथ लेनी चाहिये। संशोधन यह है कि प्रतिज्ञान अथवा शपथ प्रधान के समक्ष नहीं ली जानी चाहिये वरन् लोक सभा के अध्यक्ष अथवा राज्य सभा के सभापति या अध्यक्ष अथवा सभापति द्वारा तदर्थ नियुक्त व्यक्ति के समक्ष ली जानी चाहिये।

श्रीमान्, मैं समझता हूं कि इसका कुछ अर्थ नहीं है। मैं समझता हूं कि जो प्रथा इस समय प्रचलित है वह संशोधन में दी हुई प्रथा से अधिक युक्तियुक्त है क्योंकि शपथ के पूर्व अध्यक्ष होता ही नहीं है। इन शब्दों के साथ प्रो. शाह द्वारा पेश किये संशोधन का मैं विरोध करता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, डा. अम्बेडकर ने संशोधन संख्या 1554 को अभी पेश किया है। उसमें ''घोषणा करेगा'' शब्दों के स्थान में 'प्रतिज्ञान करेगा अथवा शपथ लेगा' शब्दों के रखने का प्रयास किया गया है। इस सम्बन्ध में अपने माननीय मित्र डा. अम्बेडकर से कुछ थोड़ा स्पष्टीकरण कराने के लिये यहां प्रस्तुत हुआ हूं। श्रीमान्, क्या मैं आपका ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करूं कि इस सभा ने अनुच्छेद 49 स्वीकार कर लिया है जो पद ग्रहण करने के पूर्व प्रधान अथवा प्रधान के स्थानापन्न व्यक्ति अथवा उसके प्रकार्यों के करने वाले व्यक्ति द्वारा प्रतिज्ञान अथवा शपथ की व्यवस्था करता है। जिस प्रतिज्ञान अथवा शपथ की उस अनुच्छेद में व्यवस्था की गई थी उसमें यह संशोधन कर दिया गया था कि प्रधान अथवा प्रधान का स्थानापन्न व्यक्ति अथवा उसके प्रकार्यों को करने वाला व्यक्ति अपना पद धारण करने के पूर्व निम्न रूप में प्रतिज्ञान करेगा अथवा शपथ लेगाः

> ''मैं अमुक...ईश्वर को साक्षी करके गम्भीरतापूर्वक प्रतिज्ञान करता हूं अथवा मैं अमुक... गम्भीरतापूर्वक शपथ लेता हूं।''

क्या मैं अपने माननीय मित्र डा. अम्बेडकर तथा इस सभा से भी यह आश्वासन प्राप्त कर सकता हूं कि अनुच्छेद 81 में उल्लिखित प्रतिज्ञान अथवा शपथ भी उसी रूप में होगी जिस रूप में कि वह इस विधान के अनुच्छेद 49 में प्रावहित है?

***अध्यक्षः** मैं मानता हूं कि वह स्पष्ट है कि इस खण्ड की शब्दावली के अनुकूल बनाने के लिये अनुसूची में संशोधन करना पड़ेगा।

इस अनुच्छेद के सानुकूल बनाने के लिये अनुसूची में भी परिवर्तन करने के लिये एक संशोधन की सूचना है। मुझे एक कठिनाई मालूम हुई है। अनुच्छेद 81 के अन्तर्गत संसद के दोनों सदनों के प्रत्येक सदस्य को प्रधान अथवा प्रधान के द्वारा तदर्थ नियुक्त व्यक्ति के समक्ष प्रतिज्ञान करना होगा या शपथ लेनी होगी। यह काम संसद की प्रथम

[अध्यक्ष]

बैठक में होगा जबकि सदस्य प्रतिज्ञान करेंगे या शपथ लेंगे। मान लीजिये कोई सदस्य उपनिर्वाचन के पश्चात् अधिवेशन के बीच में आता है। क्या वह अध्यक्ष अथवा उपाध्यक्ष, जैसी भी स्थिति हो, के समक्ष प्रतिज्ञान कर सकेगा अथवा शपथ ले सकेगा?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि अपने मित्र प्रो. शाह द्वारा पेश किये गये संशोधन को मैं स्वीकार नहीं कर सकता हूं। यदि मुझे कहने की आज्ञा हो तो मैं यह कहूंगा कि किसी उम्मीदवार जिसका निर्वाचन हो जाता है उसके निर्वाचन के पश्चात् उस समय तक के काल में जब तक कि वह सभा का सदस्य नहीं बनता है जो घटनाक्रम है उसको प्रो. शाह ने मेरे विचार से वास्तव में गलत समझा है। यदि प्रो. शाह अनुच्छेद 81 को देखते तथा ''सदस्यों की निर्योग्यता'' नामक शीर्षक पर ध्यान देते तो सर्वप्रथम उनको यह अनुभव होता कि किसी उम्मीदवार के संसद में केवल निर्वाचित हो जाने से ही उसे संसद का सदस्य होने का अधिकार नहीं मिल जाता है। कुछ ऐसे उत्सव हैं—मैं उनको उत्सव ही कहूंगा—जिनको समुचित रूप से किसी निर्वाचित सदस्य को संसद के सदस्य बनने के पूर्व मनाना होगा। एक ऐसा ही उत्सव शपथ लेने का है जो उसे करना होगा। सभा में अपना स्थान ग्रहण करने के पूर्व उसे पहले शपथ लेनी होगी। जब तक वह शपथ नहीं लेता है तब तक सदस्य नहीं बनता और जब तक वह सदस्य नहीं बनता है तब तक उसे सभा में अपना स्थान ग्रहण करने का अधिकार नहीं है। प्रावधान इस प्रकार है। जब तक उम्मीदवार शपथ नहीं लेते और अपने स्थान ग्रहण नहीं करते हैं तब तक के सदस्य नहीं होते हैं और अध्यक्ष के निर्वाचन करने का उनको अधिकार नहीं होता है। घटना-क्रम इस प्रकार है—निर्वाचन, शपथ लेना, सदस्य बनना और तत्पश्चात् अध्यक्ष के निर्वाचन के लिये अधिकार प्राप्त करना। अत: अध्यक्ष का निर्वाचन शपथ लेने के पश्चात् होना चाहिये।

इस घटनाक्रम को ध्यान में रखते हुए यह कहना असम्भव होगा कि शपथ अध्यक्ष के समक्ष ली जायेगी क्योंकि अध्यक्ष बना ही नहीं और अध्यक्ष का जब तक निर्वाचन नहीं हो सकता तब तक कि निर्वाचित उम्मीदवार सदस्य न बनें। अत: शपथ लेने का अधिकार अध्यक्ष के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति में निहित करना ही चाहिये। यह स्थिति होने से प्रश्न यह उठता है कि शपथ लेने के इस अधिकार को किसे दिया जाये। यह स्पष्ट ही है कि यह अधिकार केवल प्रधान को ही अथवा किसी उस अन्य व्यक्ति को जिसे प्रधान तदर्थ नियुक्त करे सौंपा जा सकता है। घटनाक्रम के अनुसार केवल इसी मार्ग का अनुसरण किया जा सकता है कि शपथ लेने का अधिकार या तो प्रधान को सौंपा जाये या उस व्यक्ति को जिसे प्रधान तदर्थ नियुक्त करे। इस अधिकार को अध्यक्ष को नहीं सौंपा जा सकता है क्योंकि उस समय तक तो उसकी कोई सत्ता ही नहीं होती है।

अब मैं अपने अध्यक्ष द्वारा उठाये गये प्रश्न पर आता हूं। शपथ लेने के विषय में उपनिर्वाचन में नव-निर्वाचित सदस्य के सम्बन्ध में क्या होता है? क्या उसे प्रधान के समक्ष जाना होगा अथवा अध्यक्ष के? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि अध्यक्ष के निर्वाचित हो जाने के पश्चात् प्रधान आदेश द्वारा अपनी ओर से शपथ लेने का अधिकार अध्यक्ष को

सौंप देगा और जबकि नव-निर्वाचित उम्मीदवार संसद में शपथ लेने के लिये उपस्थित होगा तो प्रधान द्वारा अधिकार प्राप्त व्यक्ति के रूप में अध्यक्ष शपथ लेगा। अत: किसी नव-निर्वाचित व्यक्ति के लिये यह आवश्यक नहीं होगा कि वह प्रधान अथवा प्रधान द्वारा नियुक्त किसी अध्यक्ष का कार्य करने वाले अन्य व्यक्ति के समक्ष जाये।

घटना-क्रम यह है और यह विदित हो गया होगा कि अनुच्छेद 81 इस प्रकार से बनाया गया है कि वह इस क्रम के अनुरूप हो सके। मैं यह कहूंगा कि आज भी इसी कार्यप्रणाली का अनुसरण किया जाता है। प्रधान (अथवा गवर्नर-जनरल) जबकि सभा की बैठक प्रथम बार होती है तो उसकी अध्यक्षता करने के लिये किसी व्यक्ति को नियुक्त करता है। अध्यक्षता करने वाले उस अधिकारी के समक्ष प्रत्येक सदस्य शपथ लेता है अथवा प्रतिज्ञान करता है। शपथ लेने के पश्चात् अध्यक्षता करने वाला अधिकारी अध्यक्ष का निर्वाचन कराता है और अध्यक्ष के निर्वाचन के पूरा हो जाने के पश्चात् वह अवकाश ग्रहण करता है और अध्यक्ष अध्यक्षता करने वाले अधिकारी के स्थान को उस समय के पश्चात् आने वाले किसी सदस्य से शपथ लेने के प्रधान द्वारा दिये गये अधिकार सहित ग्रहण किये रहता है। अत: जैसा कि मैंने कहा था मूल मसौदा घटनाक्रम के अनुकूल है और प्रधान द्वारा अध्यक्ष को अधिकार सौंप देने हेतु जो प्रावधान सामान्य रूप से बनाया गया है वह नव-निर्वाचित व्यक्ति को शपथ लेने के लिये प्रधान के पास जाने से रोकेगा।

***अध्यक्ष:** क्या अध्यक्ष के लिये यह आवश्यक है कि वह शपथ लेने का अधिकार प्रधान से प्राप्त करे?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं निवेदन करता हूं कि वैधानिक रूप में यही है क्योंकि सभा की रचना में शपथ लेना एक संयोग मात्र है जिस पर अध्यक्ष का कोई अधिकार नहीं...।

***अध्यक्ष:** मैं उस स्थिति पर विचार नहीं कर रहा हूं। मैं तो अध्यक्ष के निर्वाचन हो जाने के पश्चात् की स्थिति पर विचार कर रहा हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे विचार से इसमें कोई गलत अथवा तुच्छ बात नहीं है केवल इस कारण कि सभा की रचना, उसका निर्माण, उसका कानूनी स्वरूप ऐसे विषय हैं जो अध्यक्ष के अधिकार से बाहर हैं। संसद के बन जाने पर अध्यक्ष पर उसके कार्य का प्रभार है और संसद जब तक नहीं बनती तब तक कि सदस्य शपथ नहीं लेते हैं। अत: प्रावधान के अनुसार शपथ लेना वास्तव में सभा निर्माण का एक अंग है और जहां तक उसका सम्बन्ध है मेरे विचार से यह अधिकार न तो अध्यक्ष का है और न उसका होना ही चाहिये।

***अध्यक्ष:** मान लीजिये सभा की किसी बाद में होने वाले बैठक में अध्यक्ष संयोगवश अनुपस्थित हो और कोई नया सदस्य उस दिन आता है जबकि उपाध्यक्ष अथवा कोई अन्य व्यक्ति अध्यक्ष पद ग्रहण किये हुए हो।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष को जो अधिकार दिया गया है वह केवल अध्यक्ष में ही निहित नहीं होता है वरन् यह उपाध्यक्ष में, सभापतियों की तालिका में अथवा किसी अन्य व्यक्ति में भी जो उस समय अध्यक्ष पद ग्रहण किये हुए हो निहित होता है।

***अध्यक्ष:** अध्यक्ष को अधिकार के सौंपे जाने पर निर्भर होना पड़ेगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** विधान द्वारा उद्भूत समस्त अधिकारियों की सद्भावना पर हमें निर्भर होना पड़ेगा।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्तप्रान्त: मुस्लिम): मैं यह जानना चाहूंगा कि जब तक समस्त सदस्य शपथ न ले लें तब तक अध्यक्ष किस प्रकार किसी दूसरे व्यक्ति को अपने अधिकार सौंप सकता है?

***अध्यक्ष:** अब मैं एक-एक करके संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है:

> ''कि अनुच्छेद 81 में 'President or some person appointed in that behalf by him' (प्रधान अथवा प्रधान द्वारा नियुक्त तदर्थ व्यक्ति) शब्दों के स्थान में 'Speaker of the House of Representatives or Chairman of the Council of States, or some person appointed in that behalf by the Speaker or the Chairman of the Council of State' (लोक सभा के अध्यक्ष अथवा राज्य-परिषद् के सभापति अथवा अध्यक्ष या राज्य-परिषद् के सभापति द्वारा तदर्थ नियुक्त व्यक्ति)'' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

> ''कि अनुच्छेद 81 में 'a declaration' (घोषणा करेगा) शब्दों के स्थान में 'an affirmation or oath' (प्रतिज्ञान करेगा अथवा शपथ लेगा) शब्द रखे जायें।''

*संशोधन स्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

> ''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 81 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*संशोधित रूप में अनुच्छेद 81 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

## अनुच्छेद 82

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 82 विधान का अंग बने।''

*(संशोधन संख्या 1555 पेश नहीं किया गया।)*

***अध्यक्षः** मैं सुझाव करता हूं कि संख्या 1556 और 1557 के संयोजन संख्या 1558 के संशोधन में आ जाते हैं यदि इस संशोधन को पेश किया जाता है तो। यदि प्रो. शाह संतुष्ट नहीं हैं तो संशोधन संख्या 1556 को पेश किया जा सकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 82 के खण्ड (1) के पश्चात् निम्न नवीन खण्ड प्रविष्ट किया जाये:

'1. (a) No person shall be a member both of Parliament and of the Legislature of a State for the time being specified in Part I or Part III of the First Schedule, and if a person is chosen a member both of Parliament and of the Legislature of such a State, then at the expiration of such period as may be specified in rules made by the President that person's seat in Parliament shall become vacant unless he has previously resigned his seat in the Legislature of the State.' ''

[1. (क) प्रथम अनुसूची के भाग 1 अथवा 3 में उल्लिखित समय तक कोई भी व्यक्ति दोनों संसद का तथा किसी राज्य के विधान-मंडल का सदस्य नहीं होगा और यदि कोई व्यक्ति दोनों संसद का तथा ऐसे किसी राज्य के विधान-मंडल का सदस्य चुना जाता है तो प्रधान द्वारा निर्मित नियमों में उल्लिखित अवधि के समाप्त हो जाने के पश्चात् यदि उस व्यक्ति ने उस राज्य के विधान-मंडल में अपने स्थान को पहले ही न त्याग दिया हो तो उस व्यक्ति का संसद में स्थान रिक्त हो जायेगा।]

श्रीमान्, इस खंड की व्याख्या की आवश्यकता नहीं है। यह एक साधारण नियम है।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि इसमें संशोधन संख्या 1556 और 1557 आ जाते हैं। श्री नजीरुद्दीन अहमद यदि यह समझते हैं कि उनका संशोधन मसौदा सम्बन्धी नहीं है तो वे अपने संशोधन संख्या 1559 को पेश कर सकते हैं।

***मि. नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 82 के खंड (2) के उपखंड (क) में 'becomes subject to any disqualifications mentioned in' (मैं वर्णित निर्योग्यताओं का पात्र हो जाता है) शब्दों के स्थान में 'is disqualified under' (के अनुसार निर्योग्य हो जाता

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

है) शब्द रखे जायें।''

अनुच्छेद 82 (2) में कहा गया है:

''यदि संसद के किसी आगार का सदस्य—(क) निकटतम आगामी अनुच्छेद के खंड (1) में वर्णित निर्योग्यताओं का पात्र हो जाता है;''

इन शब्दों के स्थान में ''निकटतम आगामी अनुच्छेद के खंड (1) के अनुसार निर्योग्य हो जाता है'' शब्द रखें जायें। निकटतम आगामी अनुच्छेद इस प्रभाव का है कि कुछ सम्भावनाओं के अन्तर्गत किसी व्यक्ति को निर्योग्य कर दिया जायेगा। यदि ये सम्भावनायें वास्तव में उत्पन्न हो जाती हैं तो निर्योग्यता स्वाभाविक तथा निरपेक्ष रूप से पूर्ण है। अनुच्छेद की मूल भाषा यह है: यदि सदस्य 'निर्योग्यताओं का पात्र हो जाता है। मैं यह कहता हूं: ''यदि वह निकटतम आगामी अनुच्छेद के उपखंड (1) के अनुसार निर्योग्य हो जाता है''। ''निर्योग्यताओं का पात्र हो जाता है'' पद में यह भाव निहित है कि ऐसी घटना होने की अधिकतर सम्भावना है और इसी कारण मैं ''निर्योग्य हो जाता है'' शब्द रखने का सुझाव करता हूं जो एक पूर्ण तथ्य का संकेत करता है। निर्योग्यताओं से सम्बन्ध रखने वाला वास्तविक खण्ड पूर्णतया निरपेक्ष है और इस विषय पर एक पूर्ण तथ्य के रूप में विचार प्रस्तुत करता है। अत: मैं सुझाव करता हूं कि मेरा संशोधन स्वीकार किया जाये। मैं इस बात से इन्कार नहीं करता हूं कि यह संशोधन कुछ मसौदा सम्बन्धी ही है। परन्तु मैं यह निवेदन करता हूं कि इसमें भिन्न प्रकार की झंझटे होंगी। यदि आप यह समझते हैं कि मसौदा-समिति द्वारा इस पर विचार न हो तो मैं चाहता हूं कि इस पर मत ले लिया जाये।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 82 के खण्ड (2) में निम्न नवीन उपखंड जोड़ दिये जाये:

'(c) or if he is recalled by the electors in his constituency for failure to properly discharge his duties,

(d) or if he dies.' ''

[(ग) अथवा यदि उसको अपने कर्त्तव्य का उचित रूप से पालन करने में असफल होने के कारण उसके निर्वाचन-क्षेत्र के निर्वाचकों द्वारा वापस बुला दिया जाता है,

(घ) अथवा यदि उसकी मृत्यु हो जाती है।]

(घ) के सम्बन्ध में मैं समझता हूं कि अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि इस सम्भावना की इस अनुच्छेद में क्योंकर व्यवस्था नहीं की गई है। यह हो सकता है कि डॉ. अम्बेडकर यह कहें कि जब कोई सदस्य मर जायेगा तो यह स्वाभाविक है कि उसका स्थान रिक्त हो जायेगा। परन्तु आपको याद होगा कि इसी विधान-परिषद् ने नियम 2 अथवा 3 में यह निर्धारित किया है कि त्यागपत्र या किसी सदस्य की मृत्यु अथवा अन्य कारण से स्थान रिक्त घोषित कर दिया जायेगा। अत: यदि हम इस अनुच्छेद में यह व्यवस्था कर दें कि सदस्य की मृत्यु होने पर उसका स्थान रिक्त हो जायेगा तो कुछ भी हानि नहीं होगी।

अपने संशोधन के प्रथम भाग के सम्बन्ध में मैं यह कहूंगा कि अब प्रजातंत्रों ने, कुछ ने कम से कम सैद्धांतिक रूप में और कुछ ने वास्तविक व्यवहार में, सदस्यों अथवा कदाचित् मंत्रियों तक को अपने-अपने निर्वाचन क्षेत्रों के प्रति अपने-अपने कर्त्तव्यों के पालन करने में असफल होने की स्थिति में वापस बुलाने की व्यवस्था की है। मैं समझता हूं कि स्विट्जरलैंड के संघानीय विधान में इस प्रकार का प्रावधान है और अमरीका के कुछ राज्यों में भी ऐसा प्रावधान है। श्रीमान्, मेरे विचार से प्रजातंत्र का जो आदर्श होना चाहिये उसकी पूर्ति यह प्रावधान बहुत कुछ अंश तक करता है। मुझे विश्वास नहीं है कि इस देश में हम आदर्श प्रजातंत्र प्राप्त कर सकेंगे और श्रीमान्, आपने कल ठीक ही कहा था कि नई व्यवस्था में अनेकों अन्तर्वर्त्ती संकट हैं। मैं अनुभव करता हूं और मुझे विश्वास है कि सभा इस बात से सहमत होगी कि चूंकि इस विधान द्वारा प्रौढ़ मताधिकार का पुर:स्थापन किया जा रहा है इसलिये हमें प्रौढ़ शिक्षा की ओर भी शीघ्र तथा तेजी से कदम उठाना चाहिये, क्योंकि मेरे विचार से प्रौढ़ शिक्षा के अभाव में प्रौढ़ मताधिकार, मैं यह तो नहीं कहूंगा कि असफल होगा परन्तु उपयोगी रूप में क्रियान्वित नहीं होगा और देश के सर्वोत्तम हित के लिये नहीं होगा। यदि इस बात की कल्पना की जाती है कि उचित तथा उपयुक्त रूप से शिक्षित निर्वाचकों के लिये संतोषप्रद रूप में अपने कर्त्तव्य का पालन करे और निर्वाचकों को यह अधिकार होना चाहिये, उनकी यह भावना होनी चाहिये, उनको यह संतोष होना चाहिये, उनके लिये यह परम्परा होनी चाहिये कि यदि उनके द्वारा निर्वाचित व्यक्ति इस प्रकार से अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं करता है तो उनको उसे वापस बुलाने का अधिकार हो। यह एक साधारण सी बात है कि आधुनिक संसदात्मक प्रजातंत्रों में एक बार निर्वाचित होने पर सदस्य अपने निर्वाचकों के प्रति कोई उत्तरदायित्व नहीं रखता है और आगामी निर्वाचन तक वह संसद में स्थान ग्रहण किये रहता है और फिर वह निर्वाचकों के पास जाकर उनसे मत देने के लिये प्रार्थना करता है। यह कोई संतोषजनक स्थिति नहीं है और मैं समझता हूं कि यदि शिक्षित निर्वाचकों को उनके द्वारा निर्वाचित सदस्य को वापस बुलाने का अधिकार सौंपा जाता है तो इसमें कोई हानि नहीं है। मैं इस बात से पूर्णतया सहमत हूं कि जब तक निर्वाचकों को समुचित शिक्षा नहीं दी जाती है तब तक यह संकट है कि निर्वाचक ठीक-ठीक कारणों के अतिरिक्त रोष, अज्ञानता, ईर्ष्या अथवा अन्य ऐसी ही भावना के कारण सदस्य को वापस बुला लेंगे परन्तु जिनको हम निर्वाचक बना रहे हैं वह एक बड़ा निर्वाचक समूह है और यदि इस सिद्धांत को स्वीकार किया जाता है तो उसके संपालनार्थ हम किसी न किसी प्रकार के तंत्र की रचना कर सकते हैं और हम किसी अनुपात को भी नियत कर सकते हैं चाहे वह निर्वाचकों का दो-तिहाई हो, तीन-चौथाई हो अथवा पांचवें भाग का चौगुना से जो सदस्य को वापस बुलाने के लिये आवश्यक हो। यह विवरण का विषय है जिसको बाद में निश्चित किया जा सकता है। मैं इस संशोधन को पेश करता हूं और सभा की स्वीकृति के लिये इसे अर्पण करता हूं।

***अध्यक्ष:** श्री कामत द्वारा पेश किये संशोधन में संशोधन संख्या 1561 और 1562 आ जाते हैं।

*(संशोधन संख्या 1563 पेश नहीं किया गया।)*

[अध्यक्ष]

संशोधन संख्या 1564 मसौदा सम्बन्धी है। अतः इसको पेश करने की आज्ञा नहीं दी जाती है।

*(संशोधन संख्या 1565 पेश नहीं किया गया।)*

***प्रो. के.टी. शाहः** श्रीमान्, मैं संशोधन संख्या 1566 और 1567 को पेश करना चाहता हूं, परन्तु यदि आप अनुमति दें तो मैं संशोधन संख्या 1568 के अनुवर्त्ती भाग को पेश करना चाहूंगा।

***अध्यक्षः** बहुत अच्छा।

***प्रो. के.टी. शाहः** मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 82 के खण्ड (3) के पश्चात् नवीन खण्ड प्रविष्ट किया जाये:

'(4) No one wo is unable to read or write or speak the National Language of India after ten years from the day this Constitution comes into operation shall be entitled to be a candidate for, or offer himself to be elected to, a seat in either House of Parliament.' ''

[(4) कोई भी व्यक्ति जो इस विधान के प्रवर्त्तन में आने के दिवस से 10 वर्ष बाद भारत की राष्ट्रीय भाषा के पढ़ने या लिखने या बोलने में असमर्थ है तो वह संसद के किसी आगार में स्थान प्राप्त करने का अथवा निर्वाचन के लिये स्वयं को प्रस्तुत करने का अधिकारी न होगा।]

मैं समझता हूं कि राष्ट्रीय भाषा के प्रयोग में प्रगति करने तथा उसे देशव्यापी बनाने के लिये यह बात बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। हमारा व्यवसाय चाहे जो कुछ हो पर कानून अथवा विधान जैसे पारिभाषिक प्रयोजनों के लिये वर्तमान समय में राष्ट्रीय भाषा के निर्माण करने तथा उसे लोकप्रिय बनाने के हेतु अभी हमें उसमें बहुत उन्नति करनी है। कम से कम विधान-मंडलों में जब तक हम किसी रूप में कोई ऐसी बात अनिवार्य रूप से न रखें जैसे कि कोई भी व्यक्ति जो राष्ट्रीय भाषा समझ, बोल या लिख न सकेगा, वह राष्ट्रीय विधान में उम्मीदवार होने या निर्वाचित होने का अधिकारी न होगा तब तक भाषा की उन्नति नहीं हो सकती है। मैं इस बात को समझता हूं कि तुरन्त ही ऐसी कोई बात रखना कठिन होगा और इसीलिये मैं यह सुझाव कर रहा हूं कि इस विधान के प्रवर्त्तन में आने के दिवस से दस वर्ष बाद प्रत्येक व्यक्ति जो संसद के किसी आगार के निर्वाचन के लिये अपने आपको उम्मीदवार के रूप में प्रस्तुत करता है उससे यह आशा की जायेगी कि वह पर्याप्त रूप से राष्ट्रीय भाषा के पढ़ने-लिखने का ज्ञान रखे। मैं समझता हूं कि जिस परिस्थिति में हम हैं उसके लिये यह महत्त्वपूर्ण तथा आवश्यक है कि कोई ऐसा प्रावधान विधान में रखा जाये और इसी हेतु मेरा यह प्रस्ताव है। मैं आशा करता हूं कि यह खंड सभा को मान्य होगा।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1568 पर श्री लक्ष्मीनारायण साहू द्वारा संशोधन संख्या 89 की सूचना है। पर उसकी आवश्यकता ही नहीं होती क्योंकि संशोधन संख्या 1568 पेश ही नहीं किया गया है। श्री साहू का संशोधन संख्या 1569 श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन में आ जाता है अत: उसको अलग पेश करने की आवश्यकता नहीं है। अब संशोधनों अथवा मूल अनुच्छेद पर वाद-विवाद हो सकता है।

***श्री तजम्मुल हुसैन:** अध्यक्ष महोदय, सर्वप्रथम मैं डा. अम्बेडकर के संशोधन को लेता हूं। उनके संशोधन में यह कहा गया है कि एक ही समय कोई व्यक्ति दोनों विधान-मंडलों का सदस्य नहीं होगा। यह बड़ा ही अटल सिद्धांत है। यदि किसी सदस्य का निर्वाचन दोनों विधान-मंडलों में हो जाता है तो उसे किसी एक में अपना स्थान त्याग देना चाहिये। अब भी यही बात है। इस सभा के कुछ सदस्य प्रान्तीय विधान-मंडलों के भी सदस्य हैं। यह एक अव्यवस्था है जिसको मिटाने का इस संशोधन में प्रयास किया गया है। इस कारण मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

इसके बाद श्री नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन संख्या 1559 है। मैं उसका भी समर्थन करता हूं। मसौदा समिति ने जिन शब्दों का प्रयोग किया है वे ''निर्योग्यताओं का पात्र हो जाता है'' शब्द हैं। ''निर्योग्यताओं का पात्र हो जाता है'' ''निर्योग्य हो जाता है'' से सर्वथा भिन्न है। ''निर्योग्य हो जाता है'' एक निश्चित बात है कि सदस्य निर्योग्य हो गया। ''निर्योग्यताओं का पात्र होगा'' एक अनिश्चित बात है। मैं समझता हूं कि इस संशोधन का समर्थन होना चाहिये। इसके पश्चात् मेरे माननीय मित्र श्री कामत का संशोधन संख्या 1590 आता है जिसका मैं विरोध करता हूं। वे कहते हैं कि यदि किसी सदस्य को अपने कर्त्तव्य के उचित रूप में पालन करने में असफल होने पर निर्वाचन क्षेत्र द्वारा वापस बुला लिया जाता है तो उसके स्थान को रिक्त घोषित कर दिया जायेगा। श्रीमान्, राजनीति में क्या होता है? मान लीजिये निर्वाचन होता है और उसमें एक स्थान के लिये तीन उम्मीदवार खड़े होते हैं और मान लीजिये कि 1000 मतदाता हैं। दो उम्मीदवार जो सफल नहीं होते हैं उनमें से हर एक 300 मत प्राप्त करता है और जो व्यक्ति सफल हो जाता है उसे 400 मत मिलते हैं तो यद्यपि उसके विरुद्ध 600 मत हैं पर फिर भी वह सफल हो जाता है। अब जबकि यह सभा का सदस्य हो जाता है तो वे 600 मतदाता उसके विरुद्ध संगठन कर लेते हैं और कहते हैं: ''आप उचित रूप से अपने कर्त्तव्य पालन में असफल रहे और हम आपको वापस बुलाते हैं''। मैं समझता हूं कि, श्रीमान्, यह बड़ा ही संकटास्पद प्रावधान है और मेरे विचार से इसे स्वीकार नहीं करना चाहिये। दूसरा प्रावधान यह है कि यदि किसी सदस्य की मृत्यु हो जाये तो उसका स्थान रिक्त घोषित करना ही पड़ेगा। सदस्य की मृत्यु के पश्चात् वह रिक्त होने के अतिरिक्त अन्य किसी रूप में रह ही नहीं सकता है और मेरे माननीय मित्र मुझे क्षमा करेंगे यदि मैं यह समझूं कि उनका संशोधन मूर्खतापूर्ण है।

***श्री एच.वी. कामत:** क्या मैं अपने माननीय मित्र को यह स्मरण करा सकता हूं कि इस परिषद् में हमने इस नियम को पारित किया था तो वे स्वयं इसमें सम्मिलित थे?

***अध्यक्ष:** उनको वह सब याद है। हमें याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है।

***श्री तजम्मुल हुसैन:** इन शब्दों के कहने के पश्चात् मैं अपना स्थान ग्रहण करता हूं।

***श्री आर.के. सिधवा:** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, श्री कामत का संशोधन न तो प्रयोग में आने योग्य है और न व्यवहार में लाने योग्य है। वे कहते हैं ''अथवा यदि उसको उचित रूप से अपने कर्त्तव्य पालन में असफल होने पर उसके निर्वाचक क्षेत्र में निर्वाचकों द्वारा वापस बुला लिया जाता है''। पर इसे निश्चित कौन करेगा? ''निर्वाचक'' तब तो इसका यह अर्थ होगा कि जिस प्रकार मतपेटिका के जरिये से किसी अधिकारी द्वारा उसका निर्वाचन किया जाता है उसी रूप में किसी अधिकारी द्वारा वास्तव में मतदान करना पड़ेगा। श्रीमान्, मैं यह जानता हूं कि कुछ निर्वाचन क्षेत्रों ने सदस्य के कार्यों का विरोध करते हुए लोक सभा में सदस्य के विरुद्ध प्रस्ताव पारित किये हैं। 5,000 अथवा 10,000 अथवा 500 व्यक्ति यह घोषणा कर सकते हैं कि सदस्य में निर्वाचकों का विश्वास नहीं रहा और उसको वापस बुला लिया जाये। क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि क्या निर्वाचकों का यही विचार है? उन 4000 या 5000 व्यक्तियों में से तीन-चौथाई सदस्य मतदाता ही न हों। वे जनता के कुछ और लोगों में से हो सकते हैं। अत: जब तक यह न कहा जाये कि यह उसी विधि से होगा जिस विधि से अर्थात् मतपेटिका में नियमित विधि से मतदान द्वारा उसका निर्वाचन हुआ है तब तक यह सम्भव नहीं हो सकता है। यदि ऐसी कोई विधि स्वीकार की जाती है तब तो मैं इस बात को समझ सकता हूं, परन्तु यह सम्भव नहीं है और न कहीं क्रियान्वित ही है। इसलिये, श्रीमान् मैं इस खण्ड के प्रति स्पष्ट विरोध प्रकट करता हूं कि इस संशोधन को स्वीकार न किया जाये। जिस सदस्य की मृत्यु हो जाती है उसके सम्बन्ध में आज भी वर्तमान अधिनियम के अनुसार नया चुनाव होता है। कार्यालय इस बात से परिचित है। अत: मैं समझता हूं कि इस संशोधन को स्वीकार न किया जाये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं श्री नजीरुद्दीन अहमद के अथवा श्री कामत के किसी भी संशोधन को स्वीकार नहीं करता हूं।

***अध्यक्ष:** अब मैं एक-एक करके संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है:

> ''कि अनुच्छेद 82 के खण्ड (1) के पश्चात् निम्न नवीन खण्ड प्रविष्ट किया जाये:
>
> '1 (a) No person shall be a member both of Parliament and of the Legislature of a State for the time being specified in Part I or Part III of the First Schedule and if a person is chosen a member both of Parliament and of the Legislature of such a State, then at the expiration

of such period as may be specified in rules made by the President that person's seat in Parliament shall become vacant, unless he has previously resigned his seat in the Legislature of the State.' ''

[1. (क) प्रथम अनुसूची के भाग 1 अथवा भाग 3 में उल्लिखित समय तक कोई भी व्यक्ति दोनों संसद का तथा किसी राज्य के विधान-मंडल का सदस्य नहीं होगा और यदि कोई व्यक्ति दोनों संसद का तथा ऐसे किसी राज्य के विधान मंडल का सदस्य चुना जाता है तो प्रधान द्वारा निर्मित नियमों में उल्लिखित अवधि के समाप्त हो जाने के पश्चात् यदि उस व्यक्ति ने उस राज्य के विधान-मंडल में अपने स्थान को पहले से ही न त्याग दिया हो तो उस व्यक्ति का संसद में स्थान रिक्त हो जायेगा।]

*संशोधन स्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 82 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'becomes subject to any disqualifications mentioned in' (में वर्णित निर्योग्यताओं का पात्र हो जाता है) शब्दों के स्थान में 'is disqualified under' (के अनुसार निर्योग्य हो जाता है) शब्द रखे जायें।''

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** श्री कामत के संशोधन के खण्डों पर मैं अलग-अलग मतदान लूंगा, क्योंकि एक संशोधन को मैंने पेश नहीं करने दिया था।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 82 के खण्ड (2) में निम्न नवीन उपखण्ड जोड़ दिया जाये:

'(c) or if he is recalled by the electors in his constituency for failure to properly discharge his duties.' ''

[(ग) अथवा यदि उसको अपने कर्त्तव्य का उचित रूप से पालन करने में असफल होने के कारण उसके निर्वाचन-क्षेत्र के निर्वाचकों द्वारा वापस बुला दिया जाता है।]

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 82 के खण्ड (2) में निम्न नवीन उपखण्ड जोड़ दिया जाये:

(d) or if he dies' ''

[(अ) अथवा यदि उसकी मृत्यु हो जाती है।]

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** इसके बाद हम संशोधन संख्या 1568 के दूसरे पैरे पर आते हैं।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 82 के खण्ड (3) के पश्चात् निम्न नवीन खण्ड प्रविष्ट किया जाये:

'No one who is unable to read or write or speak the National Language of India after 10 years from the day this Constitution comes into operation shall be entitled to be a candidate for, or offer himself to be elected to, a seat in either House of Parliament.' ''

(कोई भी व्यक्ति जो इस विधान के प्रवर्त्तन में आने के दिवस से 10 वर्ष बाद भारत की राष्ट्रीय भाषा के पढ़ने, लिखने या बोलने में असमर्थ है तो वह संसद के किसी आगार में स्थान प्राप्त करने का अथवा निर्वाचन के लिये स्वयं को प्रस्तुत करने का अधिकारी न होगा।)

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 82 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*संशोधित रूप में अनुच्छेद 82 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

---

## नवीन अनुच्छेद 82-क

***अध्यक्ष:** प्रो. शाह और झुन झुनवाला के नाम से एक संशोधन संख्या 1570 है। वह उम्मीदवारों की योग्यता के सम्बन्ध में है और मैं समझता हूं कि हम इस प्रश्न पर विचार कर ही चुके हैं। जो निर्णय किया जा चुका है उसमें यह आ ही जाता है।

***प्रो. के.टी. शाह:** श्रीमान्, मैं उसे पेश नहीं करता हूं।

---

## अनुच्छेद 83

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 83 विधान का अंग बने।''

इस अनुच्छेद पर हमारे पास अनेकों संशोधन हैं।

*(संशोधन संख्या 1571, 1572, 1573 और 1574 पेश नहीं किये गये।)*

संशोधन संख्या 1575—यह उम्मीदवारों की योग्यता के सम्बन्ध में है और पहले स्वीकार किये गये अनुच्छेद में आ जाता है। इसको पेश करने की आवश्यकता नहीं है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> ''कि अनुच्छेद 83 के खण्ड (1) के उपखण्ड (ख) में 'is of unsound mind' (वह विक्षिप्त है) शब्दों के स्थान में 'is declared by a competent court to be of unsound mind' (उसको सक्षम न्यायालय द्वारा विक्षिप्त घोषित कर दिया हो) शब्द प्रविष्ट किया जाये।''

श्रीमान्, मूल विषय में योग्यताओं की कसौटी यह निर्धारित की गई है कि यदि वह व्यक्ति विक्षिप्त हो। पर किसी कसौटी की ओर संकेत नहीं किया गया है। यह कौन मालूम करेगा कि यह व्यक्ति विक्षिप्त है या नहीं? इन परिस्थितियों में बहुधा कोई बाध्य कसौटी निर्धारित की जाती है वह कसौटी न्यायालय की जांच है। इस बात को इतना अस्पष्ट छोड़ना जितना कि छोड़ा गया है बहुत खतरनाक होगा। मैं यह निवेदन करता हूं कि लगभग प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ विक्षिप्तता है। वह सीमा पर निर्भर है अथवा वह प्रसंग पर निर्भर है। यदि कोई व्यक्ति उच्च कोटि का पूर्ण व्यक्ति है तो वह कह सकता है.....।

***अध्यक्षः** यदि माननीय सदस्य अनुच्छेद 83 के खण्ड (ख) को देखेंगे तो उनको यह विदित होगा ''यदि वह विक्षिप्त है और सक्षम न्यायालय की ऐसी घोषणा विद्यमान है।''

**श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मुझे इस पर आग्रह करने की आवश्यकता नहीं है।

*(संशोधन संख्या 1577, 1578, 1579 और 1580 पेश नहीं किये गये।)*

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 83 के खण्ड (1) उपखण्ड (घ) के स्थान में निम्न खण्ड रखा जाये:

'(d) if he has ceased to be a citizen of India, or has voluntarily acquired the citizenship of a foreign State, or is under any acknowledgment of allegiance of adherence to a foreign State and.' ''

> [(घ) यदि वह भारत का जानपद न रहा हो, अथवा उसने स्वेच्छा से किसी विदेशी राज्य की जानपदता अवाप्त कर ली हो अथवा वह किसी विदेशी राज्य के प्रति अनुषक्ति अथवा अभिलग्नता स्वीकार किये हों।]

*(संशोधन संख्या 1581 पर संशोधन पेश नहीं किया गया।)*

*(संशोधन संख्या 1582, 1583 और 1584 पेश नहीं किये गये।)*

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1585, मैं समझता हूं कि यह संशोधन, संशोधन संख्या 1585 में आ जाता है। क्या आप समझते हैं कि वह 1581 से भिन्न है?

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान्, मैं कुछ शब्दों को निकालने के लिये निवेदन कर रहा हूं।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> ''कि अनुच्छेद 83 के खण्ड (1) के उपखण्ड (घ) में से 'or is a subject or a citizen or entitled to the rights or privileges of a subject or a citizen of a foreign power' (अथवा किसी विदेशी राज्य की प्रजा या जानपद है अथवा किसी विदेशी राज्य की प्रजा या जानपाद के अधिकारों अथवा विशेषाधिकारों का अधिकारी है) शब्द निकाल दिये जायें।''

श्रीमान्, मैं उस सच्चे सिद्धांत का अनुसरण कर रहा हूं जिसे मैंने कुछ मिनट पूर्व निर्धारित किया था हमें अनावश्यक शब्द समूहों से यथासम्भव बचना चाहिये और जहां तक हो सके संक्षेप में विषय को प्रस्तुत करना चाहिये और अनुच्छेद के अर्थ अथवा महत्त्व अथवा अभिप्राय का बलिदान किये बिना उसको जितना संक्षिप्त किया जा सकता करना चाहिये। संक्षेप केवल वाक् वैदग्ध्य का ही प्राण नहीं है, वरन् वह सत्य का भी प्राण है। यहां अनुच्छेद 83 के उपखण्ड (घ) में मैं यह अनुभव करता हूं कि पहला भाग ही उपखण्ड (घ) के दूसरे भाग द्वारा उत्पन्न हुई परिस्थिति का समावेश करने के लिये पर्याप्त है। कोई व्यक्ति जो किसी विदेशी राज्य के प्रति अनुषक्ति अथवा अभिलग्नता स्वीकार किये हुये है यदि उसको निर्योग्य कर दिया जाता है तो यह बात तर्कयुक्त है और इसका यही सत्य निष्कर्ष है कि यदि कोई व्यक्ति विदेशी राज्य का प्रजा अथवा जानपद है जो विदेशी राज्य के प्रति अनुषक्ति अथवा अभिलग्नता स्वीकार करने से अधिक गम्भीर विषय है तो उसको निर्योग्य कर ही देना चाहिये। प्रजा या जानपद अथवा कोई वह व्यक्ति जो प्रजा या जानपाद के अधिकारों या विशेषाधिकारों का अधिकारी है वास्तव में उस श्रेणी में आते हैं जो इस अनुच्छेद के इस उपखंड के प्रथम भाग की तुलना में बहुत अधिक गम्भीर अर्थ रखती है। यदि हम किसी व्यक्ति को इस आधार पर निर्योग्य कर देते हैं कि वह विदेशी राज्य से अनुषक्ति अथवा अभिलग्नता रखता है तो हमें यह स्पष्ट कहने की आवश्यकता नहीं है कि प्रजा के किसी व्यक्ति या जानपद को निर्योग्य किया जाता है। यदि एक श्रेणी को निर्योग्य कर दिया जाता है तो मेरे तुच्छ विचारानुसार तो उसके पश्चात् यह बात कि जानपद अथवा प्रजा को भी निर्योग्य कर दिया गया उसी रूप से स्वत: आ जानी चाहिये, जैसे रात्रि के पश्चात् दिन। अत: संक्षिप्त बनाने तथा अनावश्यक शब्द समूहों को हटाने के हेतु मैं इस संशोधन को पेश करता हूं कि यह स्वीकार किया जाये।

*(संशोधन संख्या 1586 पेश नहीं किया गया।)*

***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्त** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): संशोधन संख्या 1587 केवल मसौदा सम्बन्धी है।

***अध्यक्षः** इस विषय पर विचार करने के लिये मैं डॉ. अम्बेडकर से निवेदन करूंगा क्योंकि इस बात से कुछ कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। अन्त में 'और' शब्द के होने से यह अर्थ होगा कि समस्त निर्योग्यतायें एक साथ होनी चाहियें।

, ***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्तः** ऐसा ही मुझे लगता है, श्रीमान्।

***अध्यक्षः** उनमें से कोई एक निर्योग्यता ही पर्याप्त है। यदि आप 'और' शब्द रखते हैं तो उसका यह अर्थ होगा कि सब की सब निर्योग्यतायें एक साथ होनी चाहिये। इस रूप में तो संशोधन केवल शाब्दिक मात्र नहीं है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** 'और' शब्द के स्थान में 'अथवा' शब्द होना चाहिये।

***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्तः** मैंने समझा कि वह केवल शाब्दिक चूक है। यदि उसके स्थान में 'अथवा' शब्द रख दिया जाये तो वह सारवत् हो जाता है।

***अध्यक्षः** यदि आप 'अथवा' शब्द बढ़ा दें तो वह स्पष्ट हो जायेगा।

***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्तः** श्रीमान्, क्या मैं इस संशोधन को नियमित रूप में पेश करूं?

***अध्यक्षः** अवश्य।

***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्तः** श्रीमान् मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> ''कि अनुच्छेद 83 के खण्ड (1) के उपखंड (घ) के अन्त में आये हुये 'और' (and) शब्द को निकाल दिया जाये।''

श्रीमान्, आशय बिल्कुल स्पष्ट है और आपने उसे इतनी अच्छी तरह से समझा दिया है कि यदि हम 'और' शब्द को रखते हैं तो उसका अर्थ यह हो सकता है कि (क), (ख), (ग), (घ) और (ङ) उपखंडों में दी हुई सब निर्योग्यतायें आवश्यक होंगी। इसका यह भी ठीक अर्थ हो सकता है कि यदि किसी व्यक्ति में इनमें से एक निर्योग्यता है तो उसे निर्योग्य बनाने के लिये यह पर्याप्त नहीं है। अतः यह आवश्यक है कि 'और' शब्द को निकाल दिया जाये और उसके स्थान में 'अथवा' शब्द रखा जाये और यदि हम 'अथवा' शब्द न रखें तो भी वह ठीक होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** अध्यक्ष महोदय, मैं समझता हूं कि एक और शाब्दिक परिवर्तन की आवश्यकता है। इस खंड में यह कहा गया है कि 'subjector citizen of a forceign power' मेरे विचार से यहां 'foreign State' होना चाहिये। मैं समझता हूं कि इसमें कुछ असंगति है।

***अध्यक्ष:** डा. अम्बेडकर ने संशोधन संख्या 1581 पेश किया है। उससे शब्दों का परिवर्तन हो जाता है।

*(संशोधन संख्या 1588 पेश नहीं किया गया।)*

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 83 के खंड (1) के उपखंड (ङ) को निकाल दिया जाये।''

अनुच्छेद 83 का खंड (1) किसी आगार का सदस्य होने के लिये निर्योग्यताओं के सम्बन्ध में है। उपखंड (ख) सामान्य तथा सुप्रसिद्ध योग्यताओं के सम्बन्ध में है। उपखंड (ङ), जिसके निकाल दिये जाने के लिये मैं प्रयत्नशील हूं, इस प्रभाव का है:

> ''यदि वह संसद निर्मित किसी विधि के द्वारा अथवा अधीन इस प्रकार निर्योग्य कर दिया गया है।''

मैं यह निवेदन करता हूं कि यह उपखंड संसद को बहुत से व्यक्तियों को निर्योग्य करने का अधिकार प्रदान करता है। विधान में इस बात की स्पष्ट व्याख्या करने के अतिरिक्त इस उपखंड द्वारा नये प्रकार की निर्योग्यताओं का विनिधान करना अथवा खोजना भावी संसद पर छोड़ा गया है। मैं निवेदन करता हूं कि कुछ परिस्थितियों में यह बहुत खतरनाक हो सकता है और कोई राजनैतिक दल संसदीय कानून द्वारा आरोपित निर्योग्यताओं के आधार पर अपने विरोधियों पर रोक लगा सकता है। कुछ परिस्थितियों में ऐसी बात को होने देना खतरनाक होगा। स्वयं विधान में निर्योग्यताओं की बहुत स्पष्ट व्याख्या होनी चाहिये और उनकी खोज करने अथवा उनको निश्चित करने के कार्य को विधान-मंडल पर नहीं छोड़ना चाहिये। इसी कारण इस उपखंड को निकालने का मैं प्रयास करता हूं।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1590।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, इस संशोधनकर्त्ता ने दोषारोपण, नैतिक पतन इत्यादि का उल्लेख (ङ), (च) और (छ) में किया है, वे केवल नियमों के अंग होंगे। निर्वाचन सम्बन्धी व्यय को वापस करना विधान में नहीं है। इन सब बातों पर वादानुवाद हो गया है और ये सब बातें आ गई हैं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> ''कि अनुच्छेद 83 के खंड (1) के उपखंड (ङ) को निकाल दिया जाये और उसके स्थान में निम्न उपखंड (ङ), (च) और (छ) और खंड (2) और (3) रखे जायें और वर्तमान खंड (2) की क्रम संख्या खंड (4) कर दी जाये:
>
> '(e) if after the commencement of this Constitution, he has been convicted or has in proceedings for questioning the validity or regularity of an election, been found to have been guilty, of any

offence or corrupt or illegal practice relating to elections which has been declared by an Act of Parliament to be an offence or practice entailing disqualification for membership of this Legislature, unless such period has elapsed as may be specified in that behalf by the provisions of that Act.'

'(f) if after the commencement of this Constitution he has been convicted of any criminal offence involving moral turpitude by a court and sentenced to transportation or to imprisonment for more than two years unless a period of five years has elapsed since his release.'

'(g) if after the commencement of this Constitution having been nominated as a candidate for the Union and State Legislatures or having acted as an election agent of any person so nominated he has failed to lodge a return of election expenses within the time and in the manner required by any Act of Parliament or of any State Legislature, unless five years have elapsed from the date by which the return ought to have been lodged or the President has removed the disqualification:

Provided that a disqualification under paragraph (g) of the sub-section shall not take effect until the expiration of one month from the date by which the return ought to have been lodged.' ''

''(2) A person shall not be capable of being chosen a member of Parliament, while he is serving a sentence of transportation or of imprisonment for a criminal offence involving moral turpitude.''

''(3) When a person who, by virtue of a conviction or a conviction and a sentence becomes disqualified by virtue of paragraph (e) or (f) if sub-section (1) of this article is at the date of the disqualification a member of Parliament, his seat shall, notwithstanding anything in this article, not become vacant by reason of the disqualification until three months have elapsed from the date thereof or, if within those three

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

months an appeal or petition for revision is brought in respect of the conviction or the sentence, until that appeal or petition is disposed of, but during any period during which his membership is preserved by this sub-section, he shall not sit or vote.''

(ङ) यदि इस विधान के प्रारम्भ के पश्चात् उस पर निर्वाचन की नियमितता अथवा मान्यता पर प्रश्न करने वाली कार्यवाही चल रही हो या उसके प्रति वह दोषी सिद्ध हो चुका हो, निर्वाचन सम्बन्धी किसी ऐसे अपराध अथवा भ्रष्ट या अवैध आचरण के प्रति दोषी पाया गया हो जिनको संसद के अधिनियम द्वारा इस विधान-मंडल की सदस्यता के लिये निर्योग्य करने वाला अपराध या आचरण घोषित कर दिया गया है और यदि वह कालावधि समाप्त न हो गई हो जो उस अधिनियम के प्रावधानों द्वारा तदर्थ उल्लिखित की जा सकती है।

(च) यदि इस विधान के प्रारम्भ के पश्चात् वह किसी नैतिक पतन सम्बन्धी दंडनीय अपराध का किसी न्यायालय द्वारा दोषी सिद्ध कर दिया गया हो और उसको दो वर्ष से अधिक के लिये निर्वासन या कारावास का दंड दिया गया हो और यदि उसके मुक्त होने के समय से पांच वर्ष की अवधि व्यतीत न हो गई हो।

(छ) यदि इस विधान के प्रारम्भ के पश्चात् संघ तथा राज्य के विधान-मंडल के लिये उम्मीदवार के रूप में मनोनीत हो जाने पर अथवा इस प्रकार मनोनीत हुये किसी व्यक्ति के निर्वाचन-अभिकर्ता के रूप में कार्य करने पर वह संसद अथवा किसी राज्य के विधान-मंडल के अधिनियम द्वारा अपेक्षित रीति के अनुसार तथा समय के अन्तर्गत निर्वाचन व्ययों का विवरण दाखिल करने से, असमर्थ रहा हो और यदि विवरण पहुंचने की तिथि से पांच वर्ष न व्यतीत हो गये हों, अथवा प्रधान ने उस निर्योग्यता को हटा न दिया हो:

परन्तु इस उपधारा की कण्डिका (छ) के अन्तर्गत निर्योग्यता तब तक प्रभावी न होगी जब तक कि जिस तिथि को विवरण दाखिल करना चाहिये उस तिथि से एक माह का अवसान न हो गया हो।

(2) कोई व्यक्ति जबकि वह नैतिक पतन सम्बन्धी दंडनीय अपराध के लिये निर्वासन अथवा कारावास का दंड भुगत रहा हो तो संसद का सदस्य चुने जाने के योग्य नहीं होगा।

(3) जब कोई व्यक्ति दोषसिद्धि या दोषसिद्धि और दण्डादेश के कारण इस अनुच्छेद की उपधारा (1) को कंडिका (ङ) और (च) के आधार पर निर्योग्य हो जाता है और इस निर्योग्यता की तिथि को वह संसद का सदस्य

है तो इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुये भी जब तक कि उस तिथि से तीन महीने समाप्त न हो जायें तब तक निर्योग्यता के आधार पर उसका स्थान रिक्त नहीं होगा अथवा यदि इन तीन महीनों में उस दोषसिद्धि या दण्डादेश के सम्बन्ध में अपील की जाती है अथवा पुनर्विचार के लिये आवेदन पत्र भेजा जाता है तो जब तक केवल उस कालावधि में जिसमें इस उपधारा द्वारा उसकी सदस्यता परिरक्षित है वह न स्थान ग्रहण करेगा और न मत देगा।]

जैसा कि मैंने कल कहा था संसद को यह शक्ति नहीं देनी चाहिये कि वह उन शर्तों का निर्धारण करे जो लोगों को उम्मीदवार बनने से निर्योग्य कर दे। यहां तक कि भारतीय सरकार के अधिनियम द्वारा भी यह शक्ति फेडरल संसद को नहीं दी गई थी और उस अधिनियम में कुछ निश्चित शर्तें निर्धारित कर दी गई थीं जो उम्मीदवार को निर्योग्य बनाती थी। मैं समझता हूं कि किसी ऐसे शक्ति प्राप्त दल द्वारा इस प्रावधान के दुरुपयोग किये जाने की सम्भावना है जो अपने विरोधियों को निर्योग्य करना चाहे। इस कारण मैंने इस संशोधन को रखा है। जैसा कि कल यहां एक मित्र ने कहा था कि नई संसद यह कह सकती है ''कोई भी व्यक्ति यदि वह आयकर नहीं देता है या बहुत अधिक राजस्व नहीं देता है तो चुनाव के लिये खड़ा नहीं हो सकता है''। यह भी कोई निरी असम्भव बात नहीं है कि किसी समय प्रतिक्रियावादी शक्ति प्राप्त कर लें और वे अपने किसी भी विरोधी का चुना जाना न चाहें। अत मैं अनुभव करता हूं कि उम्मीदवारों की योग्यताओं और निर्योग्यताओं का निर्धारण करना संसद को न सौंपा जाये वरन् विधान में इन योग्यताओं तथा निर्योग्यताओं की व्यवस्था की जाये। विधान में निश्चित रूप से उम्मीदवारों की निर्योग्यताओं को निर्धारित करना चाहिये। मैं आशा करता हूं कि डा. अम्बेडकर इस संशोधन को मसौदे में शामिल कर लेंगे।

*(संशोधन संख्या 1591 से 1608 तक पेश नहीं किये गये।)*

***अध्यक्ष:** इस विषय में एक ऐसा प्रश्न है कि जिस पर मैं चाहूंगा कि मसौदा समिति विचार करे। यदि हम इस अनुच्छेद के खंड (2) का उल्लेख करें तो उसमें सभापति या उपसभापति तथा लोक सभा के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष का कोई जिक्र नहीं है। वे भी लाभ पद ग्रहण करते हैं। वे भी वेतन भोगी अफसर हैं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** सरकार के अधीन नहीं। अत: वे इसके अन्तर्गत नहीं आते हैं।

***अध्यक्ष:** यह ठीक है:

सब संशोधन पेश हो चुके हैं। यदि कोई सदस्य इन पर बोलना चाहता है वह बोल सकता है।

***डा. पी.एस. देशमुख:** अध्यक्ष महोदय, मैं उन दोनों संशोधनों का विरोध करता हूं जिसमें से एक मेरे मित्र श्री कामत द्वारा पेश किया गया है और दूसरा प्रो. सक्सेना द्वारा

[डा. पी.एस. देशमुख]

पेश किया गया है। पहला संशोधन अनुच्छेद 83 के खंड (1) (घ) के सम्बन्ध में है और दूसरा (ङ) के सम्बन्ध में है। श्री कामत ने भारत के किसी व्यक्ति, नागरिक अथवा निवासी के विदेशी शक्तियों तथा विदेशी राज्यों से सम्बन्ध की विभिन्न श्रेणियों के परिगणन पर आपत्ति की है। उनका यह सोचना ठीक ही है कि समस्त में अंश व्याप्त है। यद्यपि यह बात ठीक है परन्तु मैं समझता हूं कि जहां तक विदेशी शक्तियों तथा विदेशी राज्यों से सम्बन्ध की बात है उनकी समस्त श्रेणियों की व्याख्या करना तथा इस सम्बन्ध की व्याख्या को यथा शक्य व्यापक बनाना अधिक रक्षात्मक होगा। मैं उनसे इस बात में सहमत हूं कि संक्षिप्त करने पर हमारा अधिकतम ध्यान होना चाहिये और जिस प्रकार कि संस्कृत के कवियों ने एक ही निरर्थक शब्द का निकालना पुत्रजन्म के समान समझा उसी प्रकार इस उच्च आदर्श को हमें अपने समक्ष रखना चाहिये। परन्तु जहां तक इस विशिष्ट उपखंड का सम्बन्ध है मैं समझता हूं कि यह जैसा है वैसा ही रहे। दूसरा संशोधन जिसे प्रो. सक्सेना ने पेश किया है और एक अन्य माननीय सदस्य द्वारा जिसका समर्थन किया गया है वह खंड (1) (ङ) के सम्बन्ध में है। माननीय सदस्यों को इस बात की शंका है कि भावी संसद कुछ तुच्छ बनकर अथवा शक्ति प्राप्त दल के अनुकूलन हेतु उन निर्योग्यताओं का पुर:स्थापन कर दे जो अयुक्तियुक्त हों। मुझे विश्वास है कि कोई भी संसद उस भावना से कार्य नहीं करेगी जिसका विधान द्वारा समर्थन न हो और फिर ये निर्योग्यतायें तो स्वयं ही ऐसी हैं कि इनका रूप प्रमुख है और मुझे तो कोई ऐसी शंका नहीं होती है कि इनके दुरुपयोग किये जाने की कोई सम्भावना हो। यह सच है कि यदि ऐसा कोई प्रावधान नहीं है तो संसद के हाथ बंध जायेंगे और यदि यह भी आवश्यक हो कि भारतीय गणतंत्र में हस्तक्षेप करने से व्यक्तियों के किसी समूह को रोका जाये तो भी वे ऐसा करने में अशक्त होंगे। अत: यह बहुत आवश्यक है कि इस प्रकार का प्रावधान विधान में होना चाहिये और मुझे इस बात का भय नहीं है किसी समय भी इसका दुरुपयोग हो सकेगा। आखिरकार शक्ति प्राप्त दल को, यदि उसे लोक का समर्थन वास्तव में प्राप्त है, तो पूर्ण स्वातंत्र्य है कि वह किसी भी रीति से कार्य करे और किसी ऐसे अधिनियम को पारित करे जो उन परिस्थितियों में आवश्यक हो। यदि किसी समय संसद तुच्छ होकर कोई कार्य करती है तो लोक को उसे उत्तर देना होगा। अत: मैं अनुभव करता हूं कि सभा द्वारा इन दोनों संशोधनों को अस्वीकार किया जाये।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** (आसाम : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं केवल एक ही प्रावधान की ओर सभा का ध्यान आकर्षित करना चहाता हूं और वह है अनुच्छेद 83(1) का उपखंड (ख) अर्थात् ''यदि वह विक्षिप्त है और सक्षम न्यायालय की ऐसी घोषणा विद्यमान है''। और मैं आशा करता हूं कि मेरी बुद्धि की अविक्षिप्तावस्था पर प्रश्न नहीं किया जायेगा। यदि मैं यह कहूं कि इस खंड की शब्दावली जितनी सुन्दर हो सकती थी उतनी नहीं है। श्रीमान्, मैं अनुमान करता हूं विधान के मसौदे के लेखकों की यह इच्छा है कि किसी विक्षिप्त व्यक्ति को इस सभा का सदस्य न होने दिया जाये और मुझे विश्वास है कि वर्तमान सभा का निर्माण इस प्रकार चुनकर किया है कि इसमें कोई भी विक्षिप्त व्यक्ति नहीं आ पाया है। श्रीमान्, यदि आप इस खंड को इसी रूप में रहने देंगे तो इसका यह अर्थ होगा कि विक्षिप्त व्यक्तियों की एक बड़ी संख्या सभा

में आने वाली है क्योंकि यह योग्यता है ही कि किसी अधिकृत न्यायालय की ऐसी घोषणा होनी चाहिये कि व्यक्ति अविक्षिप्त है। गत अधिवेशन के अन्तिम दिवस में भी यह प्रश्न उठाया गया था और उसके पश्चात् मैंने भारतीय सरकार द्वारा अर्थात् विधान परिषद् के विधायी वर्ग में प्रश्न करते हुये यह जानने का प्रयत्न किया कि भारत के विभिन्न पागलखानों में जितने भी पागल हैं उनमें से कितने सक्षम न्यायालय द्वारा विक्षिप्त घोषित किये गये हैं। यदि आप इस विषय में और आगे अनुसंधान करें तो आपको यह विदित होगा कि भारत के विभिन्न पागलखानों में जितने व्यक्तियों का इलाज हो रहा है उनमें से 10 प्रतिशत भी किसी सक्षम न्यायालय द्वारा विक्षिप्त घोषित नहीं किये गये हैं। मेरा प्रश्न यह है कि क्या आप उन लोगों को मतदाताओं की नामावली में सम्मिलित करेंगे तथा चुनाव में खड़े होने देंगे जो वास्तव में पागलखानों में हैं। हम जानते हैं कि प्रत्येक नगर में कुछ ऐसे व्यक्ति है जो पागलों के समान हैं तथा वे वास्तव में पागल नहीं हैं और जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति यहां तक कि बच्चा भी जो उन पर पत्थर फेंकता है जानता है कि वे पागल हैं। यह सम्भव है और सामान्यतः सच भी है कि किसी व्यक्ति ने उन्हें विक्षिप्त घोषित करने अथवा सक्षम न्यायालय द्वारा विक्षिप्त घोषित करने का कष्ट नहीं किया है। क्या आप उन सबको नामावली में सम्मिलित होने देंगे? प्रत्येक ग्रामवासी, नगर का प्रत्येक नागरिक यह जानता है कि अमुक-अमुक व्यक्ति विक्षिप्त है तथा पागल है। क्या कोई ऐसी एजेंसी है जिसके द्वारा वह मतदाताओं के रूप में नामावली में दर्ज होने से अथवा निर्वाचन के लिये खड़े होने से रोक दिया जाये?

***अध्यक्षः** परन्तु क्या किसी ऐसे व्यक्ति के निर्वाचित हो जाने का तब तक कोई अवसर है जब तक कि समूचा का समूचा निर्वाचकगण ही विक्षिप्त न हो?

***श्री रोहिणी कुमार चौधरीः** पर, श्रीमान्, यदि मुझे उसका मत प्राप्त हो सके तो मैं उसको नामावली में दर्ज कर सकता हूं। यदि कोई सक्षम न्यायालय उसे विक्षिप्त घोषित न करे तो वह अपना नाम नामावली में दर्ज करा सकता है। ऐसी घोषणा तो केवल तभी प्राप्त की जाती है जबकि व्यक्ति धनी हो और उसके पास सम्पत्ति हो तथा उसके सम्बन्धियों को उसकी सम्पत्ति का प्रबन्ध करना पड़े। अन्य अवस्थाओं में ऐसी घोषणा प्राप्त करने के लिये प्रयत्न करते हुये व्यक्ति हमें कहां मिलते हैं? ऐसा करने की आवश्यकता ही नहीं होती है। ऐसा भी हो सकता है कि व्यक्ति इतना उग्र हो कि न्यायालय द्वारा उसको काबू में करने की आवश्यकता हो, पर इस दशा में भी उसको केवल कुछ दिनों के लिये निरीक्षण हेतु भेजा जाता है और उसके बाद ऐसी कोई घोषणा प्राप्त नहीं की जाती है। यदि आप विक्षिप्त व्यक्तियों के आने के लिये गुंजाइश रखना चाहते हैं और भावी आगार के सदस्यों के निर्वाचन में उनका हाथ रहने देना चाहते हैं तो आप इस खंड को जैसा है वैसा ही रहने दे सकते हैं। यदि आप ऐसे लोगों को पृथक् रखना चाहते हैं तो ''अधिकृत न्यायालय द्वारा घोषणा विद्यमान है'' शब्दों को निकाल दिया जाये। मैं यह इसलिये कहता हूं कि मैं अपने निजी अनुभव से यह जानता हूं कि विक्षिप्त मनुष्यों की एक बहुत बड़ी संख्या को किसी सक्षम न्यायालय द्वारा विक्षिप्त घोषित नहीं किया गया है।

***अध्यक्षः** क्या कोई और सदस्य बोलना चाहता है? क्या डा. अम्बेडकर को कुछ कहना है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं सिवाय माननीय श्री जी.एस. गुप्ता के संशोधन संख्या 1587 के और किसी संशोधन को स्वीकार नहीं करता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं एक-एक करके संशोधनों पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 83 के खंड (1) के उपखंड (घ) में निम्न खंड रखा जाये:

'(d) if he ceased to be a citizen of India, or has voluntarily acquired the citizenship of a foreign State, or is under any acknowledgement of allegiance or adherence to a foreign State and.' ''

(यदि वह भारत का जानपद न हो रहा हो, अथवा उसने स्वेच्छा से किसी विदेशी राज्य की जानपदता अवाप्त कर ली हो अथवा वह किसी विदेशी राज्य के प्रति अनुषक्ति अथवा अभिलग्नता स्वीकार किये हो।)

*संशोधन स्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् श्री कामत का संशोधन संख्या 1585 है। परन्तु डा. अम्बेडकर के संशोधन के पश्चात् वह संशोधन आता ही नहीं है।

इसके पश्चात् श्री गुप्ता का संशोधन संख्या 1587 है। वह यह है: कि 'और' शब्द को निकाल दिया जाये। अथवा क्या इस शब्द के स्थान में ''अथवा'' शब्द रखा जाये?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** बात एक ही है; चाहे ''और'' को निकाल दिया जाये या ''और'' के स्थान में ''अथवा'' रख दिया जाये।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव है:

''कि अनुच्छेद 83 के खंड (1) के उपखंड (घ) के अन्त में आये हुये 'and' 'और' शब्द को निकाल दिया जाये।''

*संशोधन स्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** तत्पश्चात् प्रो. सक्सेना का संशोधन संख्या 1590 है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, सभा की अनुमति से मैं उसे वापस लेने की प्रार्थना करता हूं।

*परिषद् की अनुमति से संशोधन वापस लिया गया।*

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् श्री नजीरुद्दीन अहमद के नाम से संशोधन संख्या 1589 है।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 83 के खंड (1) के उपखंड (ङ) को निकाल दिया जाये।''

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** इतने ही संशोधन हैं। अब मैं अनुच्छेद पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 83 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*(संशोधित रूप में अनुच्छेद 83 विधान में प्रविष्ट किया गया।)*

---

## अनुच्छेद 84

*(संशोधित संख्या 1609 से 1618 तक पेश नहीं किये गये।)*

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 84 विधान का अंग बने।''

*प्रस्ताव स्वीकार किया गया।*

*अनुच्छेद 84 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

---

## अनुच्छेद 85

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 84 विधान का अंग बने।''

*(संशोधित संख्या 1620 से 1626 तक पेश नहीं किये गये।)*

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 85 के खंड (3) में 'as are enjoyed by the members of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom at the commencement of this Constitution' (तब तक वे ही होंगी जो इस विधान के प्रारम्भ पर यूनाइटेड किंगडम के पार्लियामेंट के हाउस आफ कामन्स के सदस्यों को प्राप्त है) शब्दों के स्थान में 'as were enjoyed by the members of the Dominion Legislature of India immediately before the commencement of this Constitution' (तब तक वे ही होंगी जो इस विधान

[श्री एच.वी. कामत]

के प्रारम्भ होने से सद्यपूर्व भारतीय अधिराज्य विधान-मंडल के सदस्यों को प्राप्त है) शब्द रखे जायें।''

श्रीमान्, विभिन्न विधानों का मुझे उतना विस्तृत अथवा उतना परिमार्जित ज्ञान नहीं है जितना कि डा. अम्बेडकर को है, परन्तु इन विधानों के अपने अल्पज्ञान पर विश्वास करते हुए मैं यह कहने का साहस करता हूं कि यह अपने रूप की पहली ही मिसाल है जहां एक स्वतंत्र देश के विधान में दूसरे राज्य के विधान में आये हुए कुछ प्रावधानों का उल्लेख किया है। ऐसा करने के लिये मुझे कोई उचित कारण प्रतीत नहीं होता है। यह हो सकता है कि स्वतंत्र भारत की संसद के सदस्यों को जो अधिकार तथा विशेषाधिकार हम प्रदान करना चाहते हैं वे ठीक उसी प्रकार के अथवा न्यूनाधिक रूप में वे ही हों जो यूनाइटेड किंगडम की पार्लियामेंट के सदस्यों को प्राप्त हैं। परन्तु, श्रीमान्, क्या अति विनम्रतापूर्वक मैं यह पूछ सकता हूं कि ''जब हम अपना निजी विधान बना रहे हैं तो क्या यह आवश्यक अथवा वांछनीय है कि हम किसी अनुच्छेद में यह स्पष्ट रूप से निर्धारित कर दें कि इस विषय सम्बन्धी प्रावधान इंग्लैंड की पार्लियामेंट के प्रावधानों के अनुसार होंगे?''

इस प्रस्ताव के समर्थन में यह तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि यूनाइटेड किंगडम का उल्लेख करने से हमारे विधान अथवा हमारे राज्य के गौरव में कोई कमी नहीं आती है और फिर इस तर्क द्वारा इस बात की और भी पुष्टि की जा सकती है कि अब हमने यह घोषणा कर दी है कि भारत राष्ट्रसंघ का पूरा सदस्य है इसलिये अब इंग्लैंड की पार्लियामेंट का हवाला देने में कोई आपत्ति अथवा रुकावट नहीं होनी चाहिये। चाहे वह अपमानजनक न हो अथवा विधान की प्रतिष्ठा को कम न करता हो, परन्तु क्या सभा के गम्भीर विचारार्थ मैं यह पूछ सकता हूं कि क्या वही विधान की प्रतिष्ठा को बढ़ाता है? हम यह कहते हैं कि अमुक-अमुक बातें वैसी ही होनी चाहिये जैसी कि यूनाइटेड किंगडम अथवा अमरीका में हैं। किसी अन्य देश से कोई बात लेकर अपने विधान में उल्लेख के रूप में उसको समावेश करने की अपेक्षा क्या यह बराबर तथा अधिक आनन्ददायक नहीं होगा कि हम अपनी ही पूर्वोक्तियों अथवा अपनी भारतीय परम्पराओं पर ही विश्वास करें? क्या यह कहना पर्याप्त नहीं है कि सदस्यों के अधिकार विशेषाधिकार तथा विमुक्तियां वे ही होंगी जो कि इस विधान के प्रारम्भ के पूर्व विधान-परिषद् अथवा अधिराज्य विधान-मंडल के सदस्यों को प्राप्त हैं? वैयक्तिक रूप में मैं समझता हूं कि यह बहुत ही अच्छा होगा। मैं यह आशा करने का साहस करता हूं कि इस सभा में मेरे माननीय मित्रों का झुकाव इसी विचार की ओर होगा कि यूनाइटेड किंडम का उदाहरण उदृधृत करने की अपेक्षा जो कुछ परम्परा हमने यहां स्थापित की है उस पर निर्भर होना ही अच्छा है। वास्तव में कोई भी व्यक्ति इस तथ्य पर आपत्ति नहीं करेगा कि आज जो विशेषाधिकार और विमुक्तियां हमको यहां प्राप्त हैं वे किसी रूप में भी युनाइटेड किंगडम की लोक सभा के सदस्यों को प्राप्त विशेषाधिकारों तथा विमुक्तियों से निम्न प्रकार की हैं अथवा उनसे बदतर हैं।

यह बात भी सच है कि हममें से अनेकों व्यक्ति यह भी नहीं जानते हैं कि वहां की लोक सभा के सदस्यों के क्या-क्या विशेषधिकार हैं। यह हम भली प्रकार जानते हैं

कि इस समय हमारे विशेषाधिकार क्या हैं? अतः श्रीमान्, अन्य देशों में प्रचलित प्रथाओं पर विश्वास करने की अपेक्षा अपने निजी पुष्ट आधार पर खड़े होना ही अच्छा है।

इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्ताव को सभा के विचारार्थ और स्वीकारार्थ प्रस्तुत करता हूं।

*(संशोधन संख्या 1626 पेश नहीं किया गया।)*

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> ''अनुच्छेद 85 के खंड (4) में 'a House of Parliament' (संसद् के किसी आगार में) शब्दों के पश्चात् 'or any Committee thereof' (अथवा उसकी किसी समिति में) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

इन शब्दों के प्रविष्ट कर देने के पश्चात् खंड (4) इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

> ''The provisions of clauses (1), (2) and (3) of this article shall apply in relation to persons who by vertue of this Constitution have the right to speak in, and otherwise take part in the proceedings of a House of Parliament or any Committee thereof as they apply in relation to members of Parliament.''
>
> (जिन्हें इस संविधान के सामर्थ्य से संसद के किसी आगार में अथवा उसकी किसी समिति में बोलने का, अथवा अन्य प्रकार से उसकी कार्यवाहियों में भाग लेने का अधिकार है उनके सम्बन्ध में इस अनुच्छेद के खंड (1), (2) और (3) के प्रावधान उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे संसद के सदस्यों के सम्बन्ध में लागू हैं।)

मेरे संशोधन का उद्देश्य यह है कि खंड (4) को इस अनुच्छेद के खंड (2) के अनुरूप कर दिया जाये। खंड (2) के अनुसार संसद का सदस्य सभा में जो कुछ कहता है उससे सम्बन्धित तथा संसद की समिति में वह जो कुछ कहे उससे सम्बन्धित न्यायालय में किसी कार्यवाही से मुक्त है। उसी प्रकार यह विशेषाधिकार खंड (4) के अन्तर्गत संसद के किसी गैर-सदस्य को भी दिया गया है, परन्तु संसद की किसी समति में वह जो कुछ कहे उसके सम्बन्ध में नहीं है वरन् वह सभा में जो कुछ कहे उसके सम्बन्ध में ही है। मैं ऐसा कोई कारण नहीं समझ पाता हूं कि संसद के किसी गैर-सदस्य को यह विशेषाधिकार क्योंकर न दिया जाये। मैं समझता हूं कि इस विशेषाधिकार का विस्तार संसद के गैर-सदस्य तक भी चाहे वह समिति के सदस्य के रूप में अथवा साक्षी के रूप में वहां जो कुछ भी कहे उसके सम्बन्ध में भी पूर्ण रूप से कर देना चाहिये। मैं समझता हूं कि सामान्य रूप से हम विशेषज्ञों को उनके अनुभव तथा प्रौद्योगिक ज्ञान से लाभ उठाने तथा सहायता पाने के लिये आमंत्रित करेंगे। बहुधा संसद की उपसमितियां अपने

[श्री जसपतराय कपूर]

समक्ष साक्ष्य प्राप्त करने के लिये उच्च व्यवसायों के सदस्यों तथा प्रौद्योगिक विशेषज्ञों को आमंत्रित करेगी जिससे कि महत्त्वपूर्ण विषयों पर ठीक-ठीक निर्णय किया जा सके। ऐसी स्थिति होने पर मैं समझता हूं कि यह बहुत ही आवश्यक है कि संसद की उपसमितियों द्वारा आमंत्रित व्यक्तियों के साक्ष्य रूप से अथवा अन्य प्रकार से कुछ कहने के सम्बन्ध में भी विशेषाधिकार दिया जाये। यह एक बहुत बड़ी त्रुटि है और इस कारण मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन को शीघ्र ही स्वीकार कर लेगी।

*(संशोधन संख्या 1628 से 1630 तक पेश नहीं किये गये।)*

***प्रो. के.टी. शाह:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 85 के खंड (4) के पश्चात् निम्न नवीन खंड प्रविष्ट किया जाये:

'(5) In all matters of privilege of either House of Parliament or of members thereof the House concerned shall be the sole judge and any order, decree or sentence duly passed by that House shall be enforced by the officers or under the authority thereof.''

[(5) संसद के किसी आगार अथवा उसके सदस्यों के विशेषाधिकार के विषय में तत्सम्बन्धी आगार ही एकमात्र न्यायाधीश होगा और उस आगार द्वारा उचित रूप से पारित किये गये किसी आदेश, डिक्री अथवा दंडादेश का उसके अधिकारियों द्वारा अथवा उसके प्राधिकार के अधीन प्रवर्त्तन किया जायेगा।]

श्रीमान्, अन्य देशों की वैधानिक प्रथा में सुज्ञात यह एक साधारण बात है कि सदस्यों के तथा सामूहिक रूप से आगार के भी विशेषाधिकारों के सम्बन्ध में एक सम्पूर्ण सत्ताधारी विधान-मंडल ही एकमात्र न्यायाधीश है। अत: एक अनिवार्य सिद्धांत के रूप में यह निष्कर्ष निकलता है कि विशेषाधिकारों का किसी प्रकार से अतिक्रम करने पर तत्सम्बन्धी आगार द्वारा ही उसको निपटाया जाये और आगार द्वारा पारित किसी आदेश तथा दंडादेश का प्रवर्त्तन उसी के अधिकारी अथवा उसके प्राधिकार के अधीन किया जाये।

मैं यह कोई नई बात नहीं कह रहा हूं कि इस विधान की सामर्थ्य से संसद के किसी आगार के सामूहिक विशेषाधिकार अथवा उसके सदस्यों के विशेषाधिकार के विषय में, चाहे वे कुछ भी हों, संसद का प्रत्येक आगार ही एकमात्र न्यायाधीश होगा, तथा इन विशेषाधिकारों के किसी भी अतिक्रम पर तत्सम्बन्धी आगार द्वारा विचार किया जाये तथा इसी प्रकार से पारित किये गये किसी दंडादेश का भी उसी के अधिकारियों अथवा उसके प्राधिकार के अन्तर्गत संपालन किया जाये। श्रीमान्, मैं इस संशोधन को सभा के समक्ष रखता हूं।

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद तथा उस पर किये गये संशोधन पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र श्री कामत द्वारा पेश किये गये संशोधन का मैं विरोध करना चाहता हूं। उन्होंने यह कहा कि ब्रिटिश पार्लियामेंट में हाउस आफ कामन्स के सदस्यों के विशेषाधिकारों के स्थान में यह भारत के अधिराज्य विधान-मंडल के विशेषाधिकारों को प्राप्त हों। जहां तक मैं जानता हूं हमें यहां कोई भी विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है और यदि वे हमारे समस्त विशेषाधिकारों का पूर्ण रूप से निराकरण चाहते हैं तब तो उनका स्वागत है कि वे अपना संशोधन स्वीकार करायें। फिर भी मुझे यह अनुभव अवश्य होता है कि अपने विधान में हाउस आफ कामन्स के सदस्यों को प्राप्त विशेषाधिकारों का हवाला वांछनीय नहीं होगा। बहुत से सदस्य यह भी नहीं जानते कि वे अधिकार हैं क्या? अत: मैं यह निवेदन करूंगा कि विद्वान डाक्टर, जिन पर कि विधान के मसौदे का प्रभार है, ऐसा कोई परिशिष्ट प्रविष्ट कर दें जिसमें हाउस आफ कामन्स के सदस्यों के विशेषाधिकार हों और वे ही हमारे विशेषाधिकार हो जायेंगे। इसमें शक नहीं कि वह एक बड़ा लम्बा परिशिष्ट होगा परन्तु बहुत से सदस्य उन विशेषाधिकारों से परिचित ही नहीं हैं। इसके साथ-साथ अपने विधान में हाउस आफ़ कामन्स के उन विशेषाधिकारों का उल्लेख करना भी हमारे लिये उचित नहीं होगा जो परिवर्तनशील हैं। हम अपने लिये वे विशेषाधिकार रख सकते हैं जो किसी विशेष समय वर्तमान हों। यह सत्य है कि संसद अपने विशेषाधिकारों के बनाने का अधिकार रखती है परन्तु जब तक वह नहीं बना पाती है तब तक प्रस्तावित परिशिष्ट में परिगणित विशेषाधिकारों का ही उपभोग किया जाये। अत: हमें हाउस आफ कामन्स के सदस्यों द्वारा भोग्य विशेषाधिकारों की व्याख्या करनी चाहिये और अपने विधान में उनको परिशिष्ट के रूप में रखना चाहिये जिससे सदस्य यह जान सकें कि वे विशेषाधिकार क्या हैं? मैं आशा करता हूं कि श्री कामत प्रस्तुत रूप में अपने संशोधन पर आग्रह नहीं करेंगे जिसका कि अर्थ यह होगा कि भविष्य में कई वर्षों तक इस आगार के सदस्यों के विशेषाधिकारों का निराकरण हो जायेगा।

मैं अनुच्छेद 85 के खंड (2) के एक और पहलू की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं जिसमें दिया हुआ है:

> ''No member of Parliament shall be liable to any proceedings in any court in respect of anything said or any vote given by him in Parliament or any committee thereof, and no person shall be so liable in respect of the publication by or under the authority of either House of Parliament of any report, paper, votes or proceedings.''
>
> (संसद में या उसकी किसी समिति में कही हुई किसी बात अथवा दिये हुए किसी मत के सम्बन्ध में संसद के किसी सदस्य के विरुद्ध किसी न्यायालय में कोई कार्यवाही न चल सकेगी और न किसी व्यक्ति के विरुद्ध, संसद के किसी आगार के प्राधिकार के द्वारा अथवा अधीन किसी विवरण-पत्र, मतों अथवा कार्यवाहियों के प्रकाशन के विषय में इस प्रकार की कोई कार्यवाही चल सकेगी।)

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

यह विशेषाधिकार ''संसद के किसी आगार के प्राधिकार के अधीन'' प्रकाशन के सम्बन्ध में ही दिया गया है। यह बड़ी महत्त्वपूर्ण बात है। दस या पन्द्रह वर्ष पूर्व केन्द्रीय परिषद् के एक माननीय सदस्य पंडित कृष्णकान्त मालवीय ने सभा में एक भाषण दिया था जिसको समाचार-पत्रों ने दबा दिया परन्तु उन्होंने इलाहाबाद के अपने पत्र में उस भाषण का प्रकाशन कर दिया। इस प्रकाशन के आधार पर कार्यवाही चलाई गई। यदि मैं कोई भाषण दूं और सरकार का यह विचार हो कि समाचार-पत्रों में इसका प्रकाशन न हो और यदि मैं अपने समाचार-पत्र में उसे प्रकाशित करा दूं तो मुझ पर कार्यवाही चलाई जा सकती है। सभा में मैं जो कुछ बोलूं उस पर विशेषाधिकार होना चाहिये। यदि जनता यह न जान पाये कि मैंने यहां क्या कहा तो जिस निर्वाचकगण ने मुझे चुना है उसके प्रति मैं अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं कर सकता हूं। मैं उस विशेषाधिकार को जिसकी इस खंड में व्याख्या की गई है निरपेक्ष रूप में चाहता हूं जिससे कि सभा में जो कुछ कहा जाये वह किसी भी पत्र में प्रकाशित हो सके और लोग यह जान सकें कि यहां क्या कहा गया है। यह सत्य है कि जो कुछ यहां कहा जाता है वह सरकारी प्रकाशनों में प्रकाशित किया जायेगा और जनता के लिये प्राप्य होगा पर बहुत थोड़े व्यक्ति उसे पढ़ सकते हैं। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है कि दैनिक तथा मासिक पत्रों को जो कुछ यहां कहा जाये उस सब को प्रकाशित करने का विशेषाधिकार हो। श्रीमान् यदि सभा का कोई सदस्य सदस्य होकर अपने विशेषाधिकारों का दुरुपयोग करता है तो सभा को यह अधिकार है कि वह उसे सभा से अलग कर दे। मैं नहीं समझता हूं कि इन विशेषाधिकारों के दुरुपयोग का कोई भय सदस्यों को इन अधिकारों के प्रदान करने से हमें रोके। यदि राष्ट्रपति को यह विदित होता है कि कोई सदस्य अपने अधिकारों का तथा विशेषाधिकारों का दुरुपयोग कर रहा है तो वह उसको रोक देगा और उसके भाषण में से आपत्तिजनक भागों को निकाल देगा। मैं आशा करता हूं कि विद्वान डॉ. अम्बेडकर इस बात का ध्यान रखेंगे कि सदस्यों के सभा में तथा बाहर दिये गये भाषणों के प्रकाशन के सम्बन्ध में सदस्यों के विशेषाधिकार निरपेक्ष हों न कि वे संसद के प्राधिकार के द्वारा अथवा उसके अधीन प्रकाशन तक ही सीमित रहें। सदस्यों के लिये यह बड़े महत्त्व का प्रश्न है।

***श्री एच.वी. कामत:** वैयक्तिक स्पष्टीकरण हेतु एक शब्द है, श्रीमान्। मैं अपने माननीय मित्र श्री शिब्बनलाल सक्सेना से यह कहूंगा कि मेरे संशोधन के स्वीकार कर लेने का अर्थ विशेषाधिकारों के न होने से नहीं है। मैं उनको यह स्मरण कराऊंगा कि कार्यप्रणाली के नियमों के अन्तर्गत, जिनको इस सभा ने विधान-मंडल के रूप में बैठकर प्रयोगात्मक रूप से अंगीकार किया है, पर विशेषाधिकार-समिति होगी जो इस विषय पर विचार करेगी और सभा के विभिन्न विशेषाधिकारों को परिभाषित करेगी।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं सभा का ध्यान अनुच्छेद 85 के कतिपय पहलुओं की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। वह सदस्यों के विशेषाधिकारों तथा विमुक्तियों के सम्बन्ध में है। पहले खंड में यह कहा गया है कि संसद में भाषण स्वातंत्र्य होगा। दूसरे खंड में कहा गया है कि प्रकाशन का भी विशेषाधिकार है यदि वह प्रकाशन संसद के किसी आगार के प्राधिकार द्वारा अथवा उसके अधीन हो। इसके अर्न्तगत बाहर के समाचार-पत्रों द्वारा भाषणों का प्रकाशन नहीं आता है। मैं समझता हूं कि सदस्य के आगार में कुछ

भी बोलने के अधिकार की प्रत्याभूति होनी चाहिये—हां, यह अवश्य है कि वह कार्यप्रणाली के नियमों तथा राष्ट्रपति के आदेशों के अधीन हों। यह बहुत ही वांछनीय है कि किसी भी आगार में यदि कोई ऐसे भाषण दिये जाते हैं जो आपत्तिजनक नहीं है और जिनको अध्यक्ष अथवा सभापति नियम विरुद्ध घोषित नहीं करता है तो उनका प्रकाशन बाहर से समाचार-पत्रों में भी संसद के आगारों के प्राधिकार के बिना ही पूर्ण रूप से होना चाहिये। मैं निवेदन करता हूं कि जनाधिकारों में समाचार-पत्रों की स्वतंत्रता बड़ा ही महत्त्वपूर्ण पद है। यदि कोई प्रकाशन आगार के प्राधिकार द्वारा अथवा उसके अधीन हो सकता तो तो समाचार-पत्रों को भी उसके प्रकाशन की स्वतंत्रता होनी चाहिये। यह आवश्यक है कि समाचार-पत्र भी आगार की कार्यवाहियों का प्रकाशन कर सकें तथा उन पर उचित आलोचना भी कर सकें। यह कुछ-कुछ असंगत सा प्रतीत होता है कि आगार के प्राधिकार द्वारा जिसका प्रकाशन हो सकता है उसका प्रकाशन समाचार-पत्रों में न हो सके। विधान के मसौदे में यह एक कमी है जिस पर सावधानी से विचार करने की आवश्यकता है।

इस खंड के अनुच्छेद (3) के सम्बन्ध में मैं यह कहूंगा कि उसके प्रावधान अस्पष्ट हैं उसके द्वारा जो विशेषाधिकार तथा विमुक्तियां दी गई हैं उसकी व्याख्या जितनी अस्पष्ट हो सकती हैं उतनी अस्पष्ट हैं। इस खंड को समूचा का समूचा वर्तमान भारत सरकार के अधिनियम में से लिया गया है जिसको इंग्लैंड में अधिनियम किया गया था जहां हाउस आफ कामन्स के सदस्यों के विशेषधिकारों तथा विमुक्तियां जानी हुई हैं और उन्होंने उनका ठीक ही हवाला दिया है। मैं निवेदन करता हूं कि स्वतंत्रता के पश्चात् हम अपने अधिकारों को हाउस आफ कामन्स के सदस्यों को मिलने वाले अधिकारों से सम्बन्धित नहीं कर सकते हैं। हमारे अधिकार स्पष्ट तथा विशिष्ट रूप से परिभाषित होने चाहिये। वास्तव में हाउस आफ कामन्स के सदस्यों के विशेषाधिकार कल्याणकारी नहीं हैं। वे उन सामान्य कानूनों में दिये हुये हैं जो पाठ्य पुस्तकों में पाये जाते हैं जिनकी संख्या बहुत हैं तथा नजीरों में भी पाये जाते हैं जो कई स्थलों में बिखरी पड़ी हैं। कोई हमें यह नहीं बता सकता है कि वे विशेषाधिकार क्या हैं? श्रीमान्, यहां उन विशेषाधिकारों का देना, जो हाउस आफ कामन्स के सदस्यों को प्राप्त हैं, वस्तुतः किसी भी विशेषाधिकार के न देने के बराबर हैं। यदि कोई सदस्य, जो अपने निर्वाचन क्षेत्र में पर्यटन करना चाहता है। अपने अधिकारों को जानना चाहता है तो उसे जानकारी हासिल करने के लिये अंग्रेज प्राभिकर्ता अथवा परामर्शदाता की सहायता लेनी होगी। हाउस आफ कामन्स के सदस्य पार्लियामेंट में आते-जाते समय तथा पार्लियामेंट से सम्बन्धित कार्य करते समय बन्दी किये जाने से मुक्त हैं। ऐसे अनेकों अपरिभाषित अधिकारों के सम्बन्ध में क्या होगा? इन सबकी परिभाषा कर देनी चाहिये और वर्तमान समय में ये जिस प्रकार अस्पष्ट हैं उसी प्रकार इनको अस्पष्ट नहीं छोड़ देना चाहिये। मैं निवेदन करता हूं कि जब तक संसद का आगार इस सम्बन्ध में कानून न बना ले तब तक इस विधान के अन्त में इन अधिकारों को परिभाषित करते हुए एक परिशिष्ट जोड़ देना चाहिये।

श्री जसपतराय कपूर ने जो संशोधन पेश किया है मेरी राय से उसे स्वीकार कर लेना चाहिये। वे अनुच्छेद में ''संसद के किसी आगार में'' शब्दों के पश्चात् ''तथा उसकी समिति में'' शब्द जोड़ना चाहते हैं। ये शब्द खंड (2) में हैं ही। यह भी एक प्रमुख

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

खंड है। सदस्यों के अधिकारों तथा विशेषाधिकारों को अंग्रेजी कानून की पाठ्य पुस्तकों द्वारा निश्चित करने के लिये नहीं छोड़ देना चाहिये। वे हम पर अब और लागू नहीं होंगी। जैसा कि मैंने सुझाया है उसके अनुसार इनको स्पष्ट तथा विशिष्ट रूप से परिभाषित कर देना चाहिये।

***डा. पी.एस. देशमुखः** श्रीमान्, मुझे विवश होकर इस विचार बिन्दु से कि इन विशेषाधिकारों को इतना अस्पष्ट नहीं छोड़ना चाहिये जितने कि हैं, यथेष्ठ सहानुभूति प्रकट करनी पड़ती है। कामन्स के सदस्यों के विशेषाधिकार अच्छी तरह से समझे हुए हैं और भली प्रकार परिभाषित हैं अतः परिशिष्ट में उनकी परिगणना करने में कोई कठिनाई न होनी चाहिये। मेरे विचार से यह कहना बहुत सन्तोषजनक नहीं होगा कि विशेषाधिकार अमुक-अमुक स्थान के अमुक-अमुक व्यक्तियों के जैसे होंगे। या तो विशेषाधिकार निश्चित रूप में होने चाहियें या अस्पष्ट रूप में। यदि वे सुपरिभाषित तथा सुनिश्चित हैं तो उनके विस्तारपूर्वक विवरण देने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिये। यदि वे अस्पष्ट तथा अनिश्चित हैं तो इस प्रकार की बातों का उल्लेख मात्र करके हमें सांत्वना देना गलत है। यह कहना कि विशेषाधिकार इंग्लैंड के हाउस आफ कामन्स के सदस्यों के समान होंगे निःसन्देह अस्पष्ट है। कि बाह्य निकाय का तथा उस निकाय अथवा उसके सदस्यों को प्राप्त विशेषाधिकारों का उल्लेख मात्र करने से कोई लाभ नहीं। इन विशेषाधिकारों को विशिष्ट रूप में देने तथा उनकी परिभाषा करने का प्रयत्न करना अच्छा है। और फिर, श्रीमान्, यह कहने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिये कि ''जैसे परिशिष्ट में परिभाषित है'' और फिर उस परिशिष्ट में उनको वस्तुतः दे देना। श्रीमान्, मैं समझता हूं कि इस विचार कोण में पर्याप्त बल है और मैं आशा करता हूं कि मेरे माननीय मित्र डा. अम्बेडकर इसके लिये कोई उपयुक्त हल खोज कर सभा के आभारी होंगे। यह अनुच्छेद बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और मुझे विश्वास है कि हम उसे जल्दी में पारित नहीं होने देंगे क्योंकि इसमें संसद के सदस्यों के विशेषाधिकारों तथा अधिकारों का समावेश है।

जहां तक रिपोर्टों के प्रकाशन का सम्बन्ध है मैं अपने मित्र प्रो. सक्सेना द्वारा उठाये गये विचार बिन्दु का समर्थन करना चाहूंगा। हम उस कार्यक्षमता से परिचित हैं जिससे हमारा मुद्रण कार्यालय सरकारी रिपोर्टों को मुद्रित करता है। यदि सदस्य अथवा यहां तक कि समाचार-पत्र भी इस पर निर्भर रहें कि भाषणों का प्रकाशन सरकारी रिपोर्टों में हो तो भावी कई मासों तक सभा में जो कुछ हुआ है उसके बारे में सभा से बाहर न जाने पायेंगे। यही परिस्थिति है जो इस समय वर्तमान है। समस्त प्रयत्न करने पर भी हम इस स्थिति का परिहार तथा उसमें सुधार नहीं कर सके। अतः मैं सोचता हूं कि इन विशेषाधिकारों को कहीं न कहीं साकार रूप देना चाहिये जिससे कि यदि कोई भाषण सभा में दे दिया गया है और यदि उसको समाचार-पत्रों में प्रकाशित कर दिया गया है तो वह कोई अपराध नहीं है।

ये दो विचार बिन्दु हैं जो विचार करने योग्य हैं और मैं आशा करता हूं कि डा. अम्बेडकर मुझसे इस बात से सहमत होने के लिये इच्छुक होंगे।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, इस अनुच्छेद पर, जिस रूप में वह है, दो आपत्तियां उठाई गई हैं, एक भावना पर आश्रित है और दूसरी

किसी अन्य राज्य के आगार के उन विशेषाधिकारों के उल्लेख करने के औचित्य पर जिनसे सामान्य नागरिक तथा यहां के संसद के सदस्य सम्भवत: परिचित नहीं हैं। सर्वप्रथम, जहां तक भावना के विषय का सम्बन्ध है, मैं किसी सीमा तक उसमें शामिल हो सकता हूं, पर यह भी आवश्यक है कि उसको व्यावहारिक विचार बिन्दु से भी समझा जाये। यह सबको विदित है कि सबसे अधिक विस्तृत विशेषाधिकारों का प्रयोग इंग्लैंड की संसद के सदस्यों द्वारा किया जाता है। वर्तमान समय में निर्मित भारतीय विधान-मंडल के वर्तमान विशेषाधिकारों के समान ही यदि विशेषाधिकार रखे जायें तो फल यह होगा कि आगार की अवज्ञा करने पर भी किसी व्यक्ति को दंड नहीं दिया जा सकता। यह प्रश्न वास्तविक रूप में कलकत्ता में उत्पन्न हुआ कि क्या प्रान्तीय विधान-मंडल अथवा इस देश के अन्य विधान-मंडलों की अवज्ञा करने पर किसी व्यक्ति को दंड दिया जा सकता है। इस सम्बन्ध में यह माना गया कि कोई व्यक्ति जो प्रान्तीय अथवा केन्द्रीय विधान-मण्डल तक की अवज्ञा करने का अपराधी है उसे दण्ड देने का कोई अधिकार किसी को नहीं है जबकि अवज्ञा के लिये इंग्लैंड की पार्लियामेंट को दंड देने का अन्तर्वर्त्ती अधिकार है। अधिराज्यों और उपनिवेशों में यह प्रश्न उठा और यह माना गया है कि आस्ट्रेलिया के संयुक्त संघ अधिनियम में तथा कनाडा के अधिनियम में विस्तृत पदावली के कारण दोनों स्थानों की संसद को वे ही अधिकार हैं जो इंग्लैंड की पार्लियामेंट को प्राप्त हैं, अत: उनको अवज्ञा के लिये दंड देने का अधिकार है। क्या आप स्वयं अपने को इस अधिकार से वंचित रखना चाहते हैं? प्रश्न तो यह है।

मैं अब दूसरी आपत्ति पर विचार करूंगा। यदि आपके पास संक्षिप्त रूप में समस्त विशेषाधिकारों की तालिका बनाने का समय तथा अवकाश है तो यह तो बहुत ही अच्छा होगा। मुझे विश्वास है कि इस सभा के विधायी पक्ष की ओर अध्यक्ष द्वारा निर्मित समिति ने तब तक तालिका का बनाना बहुत ही कठिन समझा जब तक कि वे इंग्लैंड की संसदीय संस्थाओं की सम्पूर्ण क्रियाओं के पूर्ण विवरण को न लें, और इस प्रयोजन के लिये उनके पास पर्याप्त समय नहीं था अत: समिति इस विषय में अध्यक्ष को कोई प्रभाव मंत्रणा न दे सकी। मेरी बात को ठीक किया जा सकता है क्योंकि एक स्थिति में मैं था, पर बाद की स्थिति में नहीं रहा। इन परिस्थितियों के अन्तर्गत मैं निवेदन करता हूं कि मर्यादा के विरुद्ध होने की कोई भी बात नहीं है। हम अंग्रेजी भाषा को रख रहे हैं। हिन्दी के साथ-साथ कुछ समय के लिये हम अपना विधान अंग्रेजी में रख रहे हैं। तो इंग्लैंड के विशेषाधिकारों के उल्लेख पर आपत्ति क्यों?

दूसरी बात यह है कि विशेषाधिकारों की सूची बनाने के लिये उचित तंत्र की स्थापना करने में संसद को कोई रुकावट नहीं है। इस अनुच्छेद में इस बात के लिये विस्तृत क्षेत्र हैं। ''अन्य बातों में, संसद के सदस्यों के विशेषाधिकार और विमुक्तियां वे ही होंगी जो संसद, समय-समय पर, विधि द्वारा परिभाषित करे और वे जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं की जातीं, तब तक वे ही होंगी जो इस संविधान के प्रारंभ पर यूनाइटेड किंगडम के पार्लियामेंट के हाउस आफ कामन्स के सदस्यों को प्राप्त है''। अनुच्छेद में बस यही कहा गया है। यह आपके स्वविवेक में किसी रूप से रुकावट नहीं डालता है। आप विशेषाधिकारों को बढ़ा सकते हैं, उनको घटा सकते हैं तथा अन्य प्रकार के विशेषाधिकार

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

रख सकते हैं। ग्रेट ब्रिटेन की पार्लियामेंट का उल्लेख किये बिना आप स्वयं अपने विशेषाधिकार को रख सकते हैं। भावी भारतीय संसद के स्वविवेक में कोई बाधा नहीं होती है। केवल अस्थाई रूप में हाउस आफ कामन्स के विशेषाधिकारों को इस आगार पर लागू किया गया है। मर्यादा के विरुद्ध होने से कोसों दूर रहकर इस अनुच्छेद में इंग्लैंड की संसद के सदस्यों को प्राप्त विशेषाधिकारों के उल्लेख कर देने से उनको अपनी संसद द्वारा अपने निजी अधिनियमों से दिये गये विशेषाधिकारों से अप्रमुख बना दिया है। अतः खंड (3) के शब्दों में कोई बात मर्यादा के विरुद्ध नहीं है। इस प्रथा का अनुसरण लाभदायक रूप में आस्ट्रेलिया, कनाडा तथा अन्य अधिराज्यों में हुआ है और उससे पूर्ण भाषण स्वातंत्र्य तथा हर प्रकार से आगार को सर्वशक्ति प्राप्त हो गई है। जब हम अंग्रेजी भाषा ग्रहण कर रहे हैं तथा जब हम उन वैधानिक पदों का प्रयोग कर रहे हैं। जो इंग्लैंड में प्रचलित हैं तो हमें इस बात को भी ग्रहण करने में नहीं कतराना चाहिये। आप यह कह रहे हैं कि यदि हम यह कहें कि विशेषाधिकार वे ही होंगे जो हाउस आफ कामन्स के सदस्यों को प्राप्त हैं तो इसमें गुलामी की बू है, यह दासत्व का चिह्न है। पर यह बात कोसों दूर है। आज इंग्लैंड की संसद ग्रेट ब्रिटेन, अधिराज्यों तथा अन्य राज्यों पर अधिपत्य जमाये हुए हैं। यह कहना कि आप उतने ही महान् हैं जितना कि ग्रेट ब्रिटेन कोई निम्न भावना का चिह्न नहीं है, वरन् अपने आत्मसम्मान की पुष्टि करना है तथा अपनी संसद की सर्वशक्ति की भी पुष्टि करना है। अतः, श्रीमान्, मैं निवेदन करता हूं कि ब्रिटिश पार्लियामेंट के उल्लेख पर जो आपत्ति की गई है उसमें बिल्कुल बल नहीं है। इन परिस्थितियों में यह अनुच्छेद ब्रिटेन के प्रति दासत्व, गुलामी तथा भृत्यभाव की भावना के अधीन निर्माण किये जाने से कोसों दूर रहकर आत्मपुष्टि की भावना से निर्मित किया गया है और इस भावना की पुष्टि के लिये बनाया गया है कि हमारा देश तथा हमारी संसद उतनी ही महान् है जितनी कि ग्रेट ब्रिटेन की पार्लियामेंट।

***श्री एच.वी. कामतः** एक स्पष्टीकरण का प्रश्न है, श्रीमान्, क्या मैं अपने कानून विशारद मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर से यह पूछ सकता हूं कि कनाडा और आस्ट्रेलिया के विधानों में, जिसका उन्होंने उल्लेख किया है, इस विषय को प्रावहित करते हुये जो कि विचाराधीन है क्या यू.के. के विधान तथा यू.के. हाउस आफ कामन्स का प्रत्यक्ष उल्लेख करते हैं।

***माननीय सदस्यः** हां, वे करते हैं।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** मैंने कहा था कि दोनों कनाडा और आस्ट्रेलिया के विधानों में। कनाडा के विधान में पहले और आस्ट्रेलिया के विधान में पीछे। कनाडा के विधान के सम्बन्ध में यह अनुभव किया गया था कि एक कमी रह गई है और समिति की कार्यप्रणाली के सम्बन्ध में उनको विशेष कानून पारित करना पड़ा।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं सुन नहीं सका, परन्तु मैं समझता हूं कि यह कोई बात नहीं है।

***अध्यक्षः** आस्ट्रेलिया के विधान में युनाइटेड किंगडम के हाउस आफ कामन्स का प्रत्यक्ष उल्लेख है।

धारा 49–मंत्रि सभा के तथा प्रतिनिधियों के आगार के और सदस्यों के तथा प्रत्येक आगार की समितियों के वे अधिकार, विशेषाधिकार तथा विमुक्तियां होंगी जो संसद द्वारा घोषित की जाती हैं और जब तक घोषित नहीं की जाती तब तक वे होंगी जो युनाइटेड किंगडम की पार्लियामेंट के हाउस आफ कामन्स को, और उसके सदस्यों तथा समितियों को संयुक्त राष्ट्र की स्थापना पर हैं।

करीब-करीब ये ही शब्द यहां प्रयोग में लाये गये हैं।

***श्री जगत नारायण लाल** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, चूंकि श्री नजीरुद्दीन तथा कुछ अन्य मित्रों द्वारा प्रकट किये गये विचार बिन्दु से सहयोग नहीं कर सका हूं अत: मैं खंड (2) के सम्बन्ध में बोलना चाहता हूं। मैं अनुभव करता हूं कि जहां तक संसद के सदस्यों का सम्बन्ध है खंड (2) में उनको दो विशेषाधिकारों तथा विमुक्तियों को देने का प्रयास किया गया है। एक मत देने के सम्बन्ध में है और दूसरी भाषण के सम्बन्ध में है जो संसद में दिये जायेंगे और जो संसद के प्राधिकार के अधीन प्रकाशित किये जायेंगे। मेरे मित्र और विमुक्तियां चाहते हैं। वे चाहते हैं कि जिस सदस्य ने संसद में भाषण दिया है उसे और भी विमुक्तियां हों उसे बाहर समाचार-पत्रों में अपना भाषण प्रकाशित कराने का अधिकार तथा विशेषाधिकार हो। उसका सम्बन्ध समाचार-पत्रों के स्वातंत्र्य से हो सकता है पर जहां तक संसद के सदस्यों के भाषण या मत का सम्बन्ध है उसकी स्वतंत्रता इसके अन्तर्गत नहीं आती है। मैं समझता हूं कि यह बात बढ़ाना है और न तो यह न्यायसंगत है और न उचित ही है। उदाहरण के लिये यदि कोई सदस्य सद्भाषण देने के प्रयोजन से नहीं वरन् किसी व्यक्ति अथवा किसी संस्था को कलंकित करने के प्रयोजन से भाषण देना प्रारम्भ करता है और अनेकों बाहर के समाचार-पत्रों में उसको प्रकाशित करता है तो मैं यह कहूंगा कि यह न तो विचारों की सच्ची अभिव्यक्ति है और न यह विचारों की यथार्थ अभिव्यक्ति ही है। अत: मैं यह चाहूंगा कि संसद के सदस्यों को जो विशेषाधिकार दिये गये हैं और जिस विमुक्ति को देने का प्रयास किया गया है उनको माननीय सदस्य उन्हीं दो विशेषाधिकारों और विमुक्तियों तक सीमित रखें जो खंड (2) में दी गई हैं। मुझे और अधिक कुछ नहीं कहना है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** अध्यक्ष महोदय, इस धारा पर मेरा पहला विचार यह हुआ कि कदाचित यह संसद अथवा विधान-मंडल के सदस्य के विशेषाधिकारों में रुकावट डालने वाली है, पर पुन: विचार करने पर...

***एक माननीय सदस्य:** आपकी बात सुनाई नहीं देती।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** मैं आपको मंत्रणा देता हूं कि आप किसी डाक्टर के पास जायें। श्रीमान्, मुझे यह जानकर बहुत ही खेद हुआ कि मेरी बात सुनाई नहीं देती है। मेरी आवाज में कोई दोष होगा। यदि मेरी आवाज में कोई दोष नहीं है तो मैं अपने उन माननीय मित्रों से जो इसके सम्बन्ध में शिकायत करते हैं। यह निवेदन करुंगा कि वे शीघ्र जाकर किसी स्मर्ण रोग विशेषज्ञ से परामर्श करें।

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

श्रीमान्, जैसा कि मैंने कहा था, इस धारा 85 पर मेरा पहला विचार यह हुआ कि यह संसद अथवा विधान-मंडल के सदस्य के विशेषाधिकारों में रुकावट डालने वाली है। पर पुनः विचार करने पर मुझे यह विदित हुआ कि मेरे माननीय मित्र डा. अम्बेडकर ने बड़ी बुद्धिमानी की। मैं विचार करता हूं कि अनुभव ने उनको और भी अधिक बुद्धिमान बना दिया है क्योंकि मैं जानता हूं कि भविष्य में विधान-मंडल में अब से अधिक सदस्यायें आयेंगी। भावी विधान-मंडल में विशिष्ट स्थानों को अपने लिये आरक्षित न करा कर जो दांव पेच उन्होंने खेला है उससे ही यह सिद्ध हो जाता है कि जब वे स्थानों के लिये मांग नहीं करती हैं तो उनको अधिक स्थान मिल ही जायेंगे। यह एक सामान्य मानवीय अनुभव है। यदि कोई स्त्री किसी वस्तु की मांग नहीं करती है तो आप उसे और भी अधिक दे देते हैं। यदि वह मांग करती है तो कभी-कभी आप उसे अस्वीकार भी कर देते हैं। अतः श्रीमान्, मुझे विश्वास है, कुछ तो इस कारण भी कि हिन्दू कोड की अफवाह है और विधान-मंडल में अधिक सदस्यायें आयेंगी और जब आपको इस बात का विश्वास हो जायेगा तथा जब माननीय मित्र डा. अम्बेडकर को इस बात का विश्वास हो जायेगा तो फिर यह केवल एक सावधानी की ही बात है कि उसके पश्चात सदस्यों के विशेषाधिकार अबकी अपेक्षा कम कर दिये जायेंगे, परन्तु एक ऐसी बात है, श्रीमान्, जिसके प्रति मुझे कदाचित् शंका सी है और वह यह है। श्रीमान्, जब तक आप जीवित हैं लोग आपमें दोष निकालने के लिये उत्सुक रहते हैं। कभी-कभी तो आपके दोषों को बढ़ा-चढ़ाकर कहा जाता है। कभी-कभी जो दोष आप में नहीं हैं उनको भी आप पर लाद दिया जाता है। परन्तु जब मृत्यु को प्राप्त होकर विदा हो जाते हैं, उदाहरणार्थ जब मैं इस सभा में नहीं रहूंगा और जब शोक-प्रस्ताव पारित होगा तो जो गुण मुझ में नहीं हैं उनका भी बखान किया जायेगा और इस आगार में उनका मेरे गुणों के रूप में प्रदर्शन किया जायेगा। अतः जीवनकाल की अपेक्षा मृत्यु के पश्चात व्यक्ति की अधिक प्रशंसा होती है। अतः मेरा विश्वास यह है कि यह ठीक है कि जो भाषण हम यहां देते हैं उनको सामान्य कार्यवाहियों में प्रकाशित कराया जाये। इसमें कोई त्रुटि नहीं है यह ठीक ही है इसमें कोई भी त्रुटि नहीं निकाल सकता है, परन्तु आपके सम्बन्धी होंगे, आपके मित्र होंगे, आपका पुत्र होगा जो आपके भाषणों को प्रकाशित करना चाहे, उनको पुस्तकाकार में प्रकाशित करना चाहे, मान लीजिये कि उन भाषणों में कुछ आपत्तिजनक बातें हैं तो उस पर कार्यवाही चलाई जायेगी। श्रीमान्, ऐसे भी बहुत से भाषण हो सकते हैं जो प्रकाशन करने योग्य हों और आप उन्हें प्रकाशित करते हैं, परन्तु सरकार की सामान्य कार्यवाहियों का प्रकाशन प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त नहीं होता है। यदि आप प्रकाशित करें अथवा आपका कोई मित्र प्रकाशित करे तो उसे ऐसा विशेषाधिकार नहीं है और उस पर कार्यवाही चलाई जायेगी। यह एक ऐसा संकट है जो इस खंड द्वारा, जिस रूप में कि वह है, प्रस्तुत होगा। अतः मैं यह कहूंगा कि यथार्थ कार्यवाही यह है कि जिसको अध्यक्ष अथवा राष्ट्रपति ने निकाला नहीं है, जिसको अध्यक्ष अथवा राष्ट्रपति ने रोका नहीं है उसको प्रकाशित होने दिया जाये। राष्ट्रपति अथवा अध्यक्ष को किसी ऐसे भाषण को रोकने का हक है जो लोगों में हिंसा पैदा करता है, ऐसे भाषण को रोकने का हक है जिसमें अपमानजनक बातें हैं। अध्यक्ष अथवा राष्ट्रपति को सदा ऐसे भाषणों को रोकने का पूरा हक है। आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि अध्यक्ष अथवा राष्ट्रपति किसी सदस्य को सभा में उपस्थित अथवा अनुपस्थित किसी दूसरे सदस्य के प्रति अपमानजनक बातें कहने देगा? आप ऐसी धारणा क्यों करते हैं कि राष्ट्रपति उस भाषण को रहने देंगे जो लोगों में हिंसा पैदा करता है? यदि एक बार भाषण दे दिया

जाता है और यदि अध्यक्ष उसे निकालने योग्य नहीं समझते हैं तो आप सरकारी प्रकाशन के अतिरिक्त अन्य बाहरी पत्रों में उसके प्रकाशन को क्यों रोकते हैं? एक कारण के अतिरिक्त मैं अन्य कारण नहीं समझ पाता हूं जिससे प्रोत्साहित होकर डा. अम्बेडकर ने सोचा कि चूंकि सदस्याओं की संख्या अधिक होगी अत: व्यर्थ की बातें अधिक होंगी और उनको रोकना ही अच्छा होगा। यदि उन्होंने इसी तर्क को ग्रहण किया है तो मैं भी पूर्णतया उनके साथ हूं। अन्यथा इस खंड के न्यायोचित होने के लिये मुझे और कोई बात नहीं मिलती।

एक और पहलू है। यूनाइटेड किंगडम के हाउस आफ कामन्स के हवाले पर सभा के कुछ सदस्यों ने बड़ी आपत्ति की है। बेशक, यह बहुत ही अच्छा होता यदि इस उल्लेख से बच जाते। यह बताया जा चुका है कि कनाडा तथा आयरलैंड जैसे देशों में भी इन प्रावधानों को उनके विधानों में सम्मिलित किया है। आखिरकार कनाडा निवासी इंग्लैंड के ही लोग हैं। उनमें से बहुत से इंग्लैंड से ही गये हुए लोग हैं। अपना-अपना ही है और पराया-पराया। कनाडा निवासियों के इंग्लैंड के विधान को पूर्णतया अपनाने में कोई हानि नहीं है। हम तो यह दावा नहीं कर सकते हैं हमारी रगों में भी वही खून है अथवा हम मूलत: इंग्लैंड से आये और यहां आकर बसे। यह सत्य है कि वातावरण में यथेष्ट परिवर्तन हो चुका है। जब तक हम संयुक्त राष्ट्र में हैं तब तक हम भी अपनी चापलूसी कर सकते हैं और सोच सकते हैं कि हमारी रगों में भी वही खून है। अभी जब तक कि हम संयुक्त राष्ट्र में हैं इन शब्दों के रखने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि खंड पर विचार-विमर्श हो चुका है। मैं सदस्यों से संक्षिप्त भाषण देने के लिये निवेदन करूंगा।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र** (पश्चिम बंगाल : जनरल): अध्यक्ष महोदय, देखने में अनुच्छेद 85 निर्दोष प्रतीत होता है, पर मेरी सम्मति में कुछ ऐसी बातें हैं जिन पर इस सभा के माननीय सदस्यों का एक सरसरी तौर से अधिक ध्यान आकर्षित होना चाहिये।

दो बातों पर अभी तक विचार-विमर्श हुआ है। एक बात यह है कि संसद के सदस्यों को वे ही अधिकार और विशेषाधिकार होंगे जो इस विधान के प्रारम्भ के समय युनाइटेड किंगडम की पार्लियामेंट के हाउस आफ कामन्स के सदस्यों के लिये विनिहित हैं। मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने इस बात को बताया कि इसको इस रूप में क्यों रखा गया है। व्यक्तिगत विचार प्रकट करते हुए मैं यह अनुभव करता हूं कि उल्लेख द्वारा इस प्रकार का कानून निर्माण अर्थात् मूल रूप में प्रावधान को न रख कर विदेशों के विधानों का उल्लेख करते हुए कानून बनाना मेरी सम्मति में सभा द्वारा मान्य नहीं होना चाहिये। हम एक स्वतंत्र सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य के लिए विधान बना रहे हैं। स्वयं विधान में अन्तर्वर्त्ती काल के लिये युनाइटेड किंगडम की पार्लियामेंट के सदस्यों का उल्लेख कर अधिकारों तथा विशेषाधिकारों को विनिहित करने में हम अपने मार्ग से परे हो गये हैं यद्यपि इंग्लैंड में भी उन अधिकारों तथा विशेषाधिकारों की पूरी सूची नहीं है जिनका सदस्य उपभोग करते हैं। यह एक सच्ची भावना का विषय

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

है कि इन शब्दों को यहां स्थान न दिया जाये। मैं तो सम्भवत: आगामी कुछ महीनों तक अथवा एक वर्ष तक, जब तक कि हम प्रकार्य करते रहें। बिना विशेषाधिकारों के कार्य करता रहूंगा—मैं किन्हीं विशिष्ट विशेषाधिकारों के बिना ही काम करना पसन्द करूंगा अपेक्षाकृत इसके कि उन विशेषाधिकारों का विनिधान विदेशी कानून के उल्लेख द्वारा हो। इस प्रकार एक भाग पर विचार समाप्त होता है।

दूसरी बात जो सभा की कार्यवाही के प्रकाशन सम्बन्धी विमुक्ति के सम्बन्ध में है जो भाषण स्वातन्त्र्य से सम्बन्ध रखती है। अध्यक्ष महोदय, यहां आपकी अनुकम्पा से मैं कुछ ऐतिहासिक तथ्य रखना चाहूंगा जिन पर सभा के प्रत्येक सदस्य को सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिये। आप यह व्यवस्था करने जा रहे हैं कि आप इस सभा में जो कुछ भी करें सभा में आपके भाषण अथवा सभा में आपके कार्य पर पूर्णत: विशेषाधिकार है और केवल भारतीय सरकार द्वारा अथवा सभा के प्राधिकार द्वारा उसके प्रकाशन की नियुक्ति है। इसका आशय यह है कि जो भाषण हम यहां देते हैं यदि उसका सरकारी वाद-विवाद के रूप में मुद्रण तथा प्रकाशन किया जाता है और यह पूर्णत: विमुक्त है और चाहे वह अपमान-वचन हो अथवा अपमान-लेख। परन्तु उसके द्वारा उत्पन्न किसी विषय पर कार्यवाही करने का न्यायालय का क्षेत्राधिकार नहीं है। श्री जगतनारायनलाल ने एक विचार बिन्दु उपस्थित किया है जो वास्तव में आपके विचार ने योग्य है। यह सम्भावना हो सकती है कि इस प्रकार से इन विशेषाधिकारों का दुरुपयोग किया जाये, परन्तु इसका दूसरा रूप भी है। मैं आपको यह बताऊं कि यह प्रश्न हमारी संसद में किस प्रकार उठा।

सभा को शायद यह याद होगा कि कुमारी बीनादास ने बंगाल के राज्यपाल श्री स्टेनले जक्सन पर गोली चलाई। उसको गिरफ्तार कर दिया गया। राज्यपाल मेरा नहीं था। मुकदमे के दौरान में उसने न्यायालय में बयान दिया। यह बयान देशभर में कहीं से भी नहीं मिल सकता था। ऐसा हुआ कि केन्द्रीय विधान-मंडल के एक सदस्य ने उस समय बंगाल सरकार की दमनकारी नीति पर अपना भाषण देते हुए कुमारी बीनादास द्वारा मुकदमें में दिये गये पूरे बयान को पढ़ दिया। वह भेद प्रकट करने वाला प्रलेख है। उसने (कुमारी बीनादास) बंगाल में दमनकारी कार्यों की उत्पत्ति का पूर्ण इतिहास बताया और विशेषकर उन परिस्थितियों को बताया कि जिनसे विवश होकर उसे बंगाल के राज्यपाल के विरुद्ध यह भीषण कदम उठाना पड़ा। ब्रिटिश सरकार ने सुरक्षा के आधार पर समाचार-पत्रों में उसकी एक भी पंक्ति नहीं निकलने दी। प्रश्न उस समय उठा जबकि केन्द्रीय विधान-मंडल के माननीय सदस्य का यह भाषण प्रकाशित हुआ जिसमें यह बयान था। सरकार ने कहा कि यह प्रकाशित नहीं किया जा सकता है। भारतीय सरकार के कानून मंत्री सर बी.एल. मित्तर ने उस भाषण के प्रकाशन का विरोध किया जिसमें सदस्य ने अपराधिनी कुमारी बीनादास द्वारा मुकदमे में दिये गये बयान को ही कहा था। यह 1934 में हुआ। मुझे ठीक-ठीक याद नहीं 1935 में हो अथवा 1936 में—उस समय हम शिमला में दंड-विधि संशोधन के विधेयक पर विचार-विमर्श कर रहे थे। दंड-विधि संशोधन विधेयक पर सामान्य विचार-विमर्श के अन्तर्गत मेरे स्वर्गीय मित्र पण्डित कृष्णकान्त मालवीय द्वारा एक भाषण दिया गया जिसमें उन्होंने देश में तत्कथति दमनकारी उपद्रवों का सारांश बताया और यह बताने का प्रयत्न किया कि किस प्रकार ब्रिटिश सरकार उस दूषित मनोवृत्ति के लिये

उत्तरदायी है जिससे नवयुवक और नवयुवतियां बम तथा रिवोल्वारों में विश्वास, करने के लिये बाध्य हो जाते हैं। वह बड़ा ही सारगर्भित भाषण था। हमें आश्चर्य हुआ कि दूसरे दिन किसी भी समाचार-पत्र में उस दो घंटे के भाषण का, जो लिखित भाषण था और जिसको मेरे माननीय मित्र पंडित कृष्णकान्त मालवीय न सुनाया था, एक भी वाक्य किसी भी समाचार-पत्र में न छपा। तत्कालीन सरकार अर्थात् गृहमंत्री ने—मेरे विचार से उस समय सर हेनरी क्रेक गृहमंत्री था—खूब सावधानी की और इस बात का ध्यान रखा कि उस भाषण की एक भी पंक्ति समाचार-पत्रों में न निकल सके। केवल वही उसका मुद्रण तथा प्रकाशन कर सकता था जो दंड भुगतने के लिये उद्यत हो। उसके पश्चात् मेरे माननीय मित्र श्री मालवीय ने भाषण के पूरे के पूरे पाठ को जैसा था वैसा अपने समाचार-पत्र अभ्युदय में छाप दिया। उस समय की सरकार तुरन्त उन पर टूट पड़ी, उन पर मकदमा तो नहीं चलाया गया पर उनके पत्र से जमानत मांगी गई। जब यह सब कुछ हो गया तो विधान-सभा के आगार में सन् 1936 में हमने इस पर वाद-विवाद उठाया और अविश्वास का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। हम इस बात पर अड़े कि सभा के विशेषाधिकारों का इस रूप में उल्लंघन किया गया है कि जब किसी सदस्य ने आगार में भाषण दिया और उस भाषण को सरकारी प्रकाशनों अथवा सभा की कार्यवाहियों में मुद्रित और प्रकाशित किया गया तो जब उस सदस्य ने उस सम्पूर्ण भाषण को अक्षरशः अपने पत्र में प्रकाशित करा दिया तो इसके लिये भी विमुक्ति होनी चाहिये। दोनों ओर से माननीय सदस्यों द्वारा प्रबल तर्क उठाये गये थे। उस समय तत्कालीन कानून मंत्री सर नृपेन्द्र नाथ सरकार ने एक आश्चर्यजनक बयान दिया कि सभा को कोई विशेषाधिकार नहीं है यद्यपि सदैव सभा इसी विश्वास से कार्य करती चली जा रही थी कि उसको कुछ अधिकार तथा विशेषाधिकार हैं। उन्होंने कहा कि ''इस सभा को कोई विशेषाधिकार नहीं है''। वही हुआ जो होना था, हमारे दबाव से उस समय मामला तय किया गया। इस बात से एक बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रश्न खड़ा होता है। आज मुझे अपने उन मित्रों और साथियों की इस परिवर्तित विचारधारा पर आश्चर्य होता है जो उन दिनों हमारे साथ थे और जिन्होंने उस समय की सरकार के रुख की निन्दा की थी और यह दृढ़ धारणा निश्चित की थी कि किसी गैर-सरकारी एजेंसी द्वारा ईमानदारी से कार्यवाहियों की रिपोर्ट का प्रकाशन भी सुरक्षित होने योग्य है। उन दिनों ये लोग सब एकमत थे। आज हम इस बात को बिल्कुल भूल गये हैं और हम उन्हीं विशेषाधिकारों का गैर-सरकारी प्रकाशनों तक प्रसार नहीं होने देते हैं। मैं यह समझता हूं कि ऐसा हो सकता है कि वाद-विवाद में कोई सदस्य इस प्रकार की बात कहे जिसको यदि वह बाहर कह दे तो वह किसी न्यायालय की कार्यवाही से विमुक्ति नहीं पा सकता। परन्तु सभा में व्यर्थ दोषारोपण अध्यक्ष द्वारा नहीं करने दिये जायेंगे। वस्तुतः स्थायी आदेश भी इस बात की व्यवस्था करते हैं कि आप विषयान्तर होकर किसी प्रकार से अपमानजनक अथवा आपत्तिजनक कटु भाषण नहीं दे सकते हैं। यदि आप अपमानसूचक तथा अपमानजनक भाषण देते हैं तो अध्यक्ष आपको रोक देता है। सदस्य ऐसी बातें नहीं कह सकता जिनके बारे में उसे विश्वास न हो तथा जिनको वह सिद्ध नहीं कर सकता हो। जब किसी विशिष्ट सदस्य द्वारा इस प्रकार का उल्लेख किया जाता है तो आगार का अध्यक्ष अथवा सभापति तुरन्त ही उसे नियमित होने का आदेश देता है। ऐसा करने पर भी यदि सदस्य दृढ़ है और कुछ आपत्तिजनक बातें अपने भाषण में कह देता है तो क्या होता है? जब सरकार

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

उसको वाद-विवाद के उल्लेख पत्रों के रूप में प्रकाशित करती है तब तो कोई हानि नहीं है यदि सरकार उनको अधिक संख्या में मुद्रित कराती है तो कोई व्यक्ति जैसे चाहे विमुक्ति सहित उनको खरीद सकता है और उनका वितरण कर सकता है। पर बाद में यदि कोई माननीय सदस्य अथवा उसका कोई सम्बन्धी उनको प्रकाशित करना चाहता है और अपने दिये हुए भाषणों को ही अक्षरशः प्रकाशित करता है जो कि सरकारी वाद-विवाद में प्रकाशित हो चुके हैं और इस प्रकार यदि वे अपनी पुस्तकों में उनको प्रकाशित करते हैं तो इसके लिये कोई विमुक्ति नहीं है। यह अमुक्तियुक्त है, चाहे इसके लिये कुछ भी बहाना हो। मैं सभा से निवेदन करता हूं कि इस बात पर सावधानी से विचार करें।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र जिस रीति से इस विशेषाधिकार की मांग करना चाहते हैं जो मेरी सम्मति के अनुसार एक विशेषाधिकार नहीं वरन् अनुज्ञा है उस रीति पर मुझे कम आश्चर्य नहीं हुआ है। संसदों की जननी में इंग्लैंड में उन सदस्यों ने, जो सभा में तथा उससे बाहर भाषण स्वातन्त्र्य के लिये प्रयास करते रहे हैं, जिन विशेषाधिकारों की मांग की है तथा कर रहे हैं, उससे अधिक किसी बात की मांग करने का हम प्रयत्न नहीं कर रहे हैं। वे अब एक या दो पहलुओं पर विचार करें। सभा से बाहर सदस्यों को राजद्रोहात्मक भाषण देने अथवा अपमानसूचक बयान देने का अधिकार नहीं है, परन्तु सभा के भीतर यदि कोई यह समझता है कि बयान लोक कल्याण हेतु है तो वह कैसा भी कोई बयान दे सकता है चाहे वह सरकार पर आक्रमण करने वाला हो अथवा राज्य को उलटने के लिये हिंसा की शिक्षा देने वाला हो अथवा चाहे वह अपमानसूचक बयान हो। भारतीय सरकार के सन् 1919 के अधिनियम में राजद्रोहात्मक बयान तथा अपमानसूचक बयान रोक दिये जाते थे और नहीं देने दिये जाते थे।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः** अध्यक्ष की अनुमति के अधीन आप कोई भी भाषण दे सकते हैं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** सन् 1935 के अधिनियम में उसको निकाल दिया गया है।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः** उस अधिनियम के अन्तर्गत स्थायी आदेश नहीं दिये गये हैं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** सन् 1919 के अधिनियम के अन्तर्गत सभा में भी कोई राजद्रोहात्मक शब्द नहीं कहे जा सकते थे। यदि कोई कह देता था तो उस सदस्य को जो कोई राजद्रोहात्मक या अपमानसूचक बयान कहता था उसको अध्यक्ष डांट देता था। यह वह समय था जबकि विदेशी शिष्टजन-सत्ता हम पर अपना आधिपत्य जमाने का प्रयत्न कर रही थी और हमको किसी प्रकार की स्वतंत्रता नहीं देती थी। परन्तु सन् 1935 के अधिनियम के उपयोजना कानून के अधीन हमको सभा में भाषण स्वातन्त्र्य दिया गया: सभा में उसका कोई सदस्य किसी भी बयान को दे सकता है जिसको वह बाहर नहीं दे सकेगा। जो कुछ वह चाहे बाहर नहीं कह सकेगा—केवल इसलिये कि वह सदस्य है और वह कोई भी बयान दे सकता है—क्या इस अधिकार को सीमित नहीं करना है? उसे एक विशेष प्रयोजन के लिये यह विशेषाधिकार दिया गया है। यहां सदस्य जो कुछ

चाहे सभा के अन्य सदस्यों को अपने विचार को मनाने के लिये कह सकते हैं। यहां तक कि वे हिंसा के पक्ष में भी कह सकते हैं। सभा में भाषण देता हुआ कोई सदस्य दंड-विधि के भय से इधर-उधर झांकते हुए नहीं रह सकता है। वह तो बड़ा ही खतरनाक है और यदि इन सीमाओं के अन्तर्गत उसे भाषण देना होगा तब तो देश के लिये लोकतंत्र की ओर प्रगति करना असम्भव होगा। इस कारण सभा में पूर्ण स्वतंत्रता दी गई है। मेरे मित्र चाहते हैं कि चाहे वे नितान्त अनुचित भाषण दें जिसको यदि वे बाहर दें तो राजद्रोह की धारा के अन्तर्गत उन पर कार्यवाही चला दी जायेगी—तो वे यह चाहते हैं कि चूंकि वे यहां वैसा भाषण दे सकते हैं इसलिये बाहर जाकर वे इसे छपा सकते हैं। मेरे मित्र श्री रोहिणीकुमार चौधरी यह चाहते हैं कि वे अपने पुत्र से एक लाख प्रतियां प्रकाशित करने के लिये कहें और उनके पिता ने जो शब्द कहें हैं उनको समस्त संसार में प्रसारित करें। मेरे मित्र श्री मैत्र जो कुछ चाहते हैं वह यही है। अभी इस समय राजद्रोहात्मक भाषणों को छोड़कर वे हर तरह के अपमानसूचक भाषण देना चाहते हैं। हम में से कुछ ऐसे वामदल के हैं जो सरकार के विरुद्ध, चाहे वह अपनी हो या कोई विदेशी, हर प्रकार के भाषण देना चाहते हैं। हम अभी इस चक्कर से बाहर नहीं निकले हैं। सभा में हम किसी व्यक्ति के विरुद्ध किसी तरह का भाषण दे सकते हैं। यदि हम उनको बाहर कहें तो न्यायालय हमको नहीं छोड़ेगी। सभा में मुझे यह अधिकार है कि मैं यह कह दूं कि पंडित मैत्र बेईमान हैं। बाहर यदि मैं यह कह दूं तो इसके विरुद्ध मुझ पर कार्यवाही चलाई जा सकती है।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः** ऐसा कहने के लिये मैं आपको पूरी आज्ञा देता हूं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** लोक-हित में यदि वह आवश्यक है तो सभा में उसे कहने से मुझे नहीं डरना चाहिये।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः** जिस समय आप यह कहेंगे कि मैत्र बेईमान हैं उसी समय अध्यक्ष आपको नियम पालन करने का आदेश देगा।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** वर्तमान कानून के अन्तर्गत राष्ट्रपति को ऐसा करने का अधिकार नहीं है।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः** पूरा-पूरा अधिकार है, यदि आप किसी की व्यक्तिगत निन्दा करें तो।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** यदि लोक-हित में मुझे किसी व्यक्ति के वैयक्तिक चालचलन के विरुद्ध कुछ कहना है तो मुझे कहने का अधिकार है। मैं समझता हूं कि वर्तमान भारतीय सरकार के अधिनियम के अधीन मुझे यह कहने का अधिकार है कि यदि वह लोक-हित में हो, और यह अनुच्छेद उस अधिनियम की केवल प्रतिलिपि ही है। आखिर यह एक विशेषाधिकार ही है और यह एक अपवाद ही है चूंकि सामान्यतया आपको गैर-सरकारी व्यक्तियों के विरुद्ध कोई अपमानसूचक भाषण नहीं देना चाहिये अथवा ऐसे उग्र भाषण नहीं देने चाहियें जो राज्य को उलट दें। अतः इस प्रकार यदि कोई अपवाद किया जाता है तो वह विशेषाधिकार है और हमें उसकी परिसीमाओं से शिकायत नहीं होनी चाहिये। यदि उन भाषणों को प्रकाशित किया ही जाता है तो केवल रिपोर्टों में ही किया

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

जा सकता है। यहां तक कि इन रिपोर्टों की प्रतियां बाहर नहीं मिलनी चाहिये। यदि कोई व्यक्ति सरकारी रिपोर्टों की प्रतियां तक खरीदने के लिये तैयार हैं तो वह ऐसा कर सकता है। सदस्य यह तो जानते ही होंगे कि केवल अपमानसूचक भाषण देने वाला ही दंड का पात्र नहीं है, वरन् जो कोई उसे प्रकाशित कराता है वह भी दंड का पात्र है। कोई व्यक्ति क्योंकर उसकी दस लाख प्रतियां छपाये और उन्हें बांटे। यह तो पूर्णतया भिन्न प्रकार का अपराध है। यह तो स्वयं ही एक अपराध है। अपमानसूचक भाषण देने वाला दंड का पात्र है तथा वह व्यक्ति भी जो उसको प्रकाशित कराता है। यह कहना कि आप उसको यहां छपाते हैं इसलिये आप उसकी अनेकों प्रतियां और छपा सकते हैं ठीक नहीं है। यह कोई विशेषाधिकार नहीं होगा वरन् यह तो अनुज्ञा हुई। माननीय सदस्य यह कहते हैं कि इसके स्पष्टीकरण का कोई अवसर नहीं है, परन्तु स्पष्टीकरण हो अथवा नहीं एक अपमानसूचक भाषण अपमानसूचक ही है।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** यह एक आश्चर्यजनक सिद्धान्त है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** मेरे मित्र कहते हैं कि यह एक आश्चर्यजनक सिद्धांत है। एक लड़की द्वारा दिये गये भाषण का और उसके प्रकाशित न होने देने का उन्होंने उल्लेख किया था। पर मैं यह कहूंगा कि यदि वर्तमान सरकार होती तो भी उस भाषण को प्रकाश में नहीं लाना चाहिये था। ऐसा करना तो विशेषाधिकार का दुरुपयोग है। यह तो एक अनुज्ञा है। किस प्रयोजन के लिये ऐसे भाषण प्रकाशित किये जायें? समाज की व्यवस्था छिन्न-भिन्न करने के लिये, मनुष्यों में परस्पर सद्भावना का नाश करने के लिये और समस्त सम्प्रदाय को अस्त-व्यस्त करने के लिये? मैं फिर कहता हूं कि ऐसी बातें विशेषाधिकार का दुरुपयोग ही हैं। ऐसी अवस्थाओं में सामान्य नियम में एक अपवाद रखा जाता है। यथार्थत: यह एक विशेष शस्त्र है जो हमारे हाथों में सौंपा गया है और इस शस्त्र का सावधानी से प्रयोग करना चाहिये। किसी व्यक्ति द्वारा न्यायालय में घसीटे जाने से सतत् निर्भय होकर सभा में सदस्य स्वतंत्रतापूर्वक बोल सकें, यदि ऐसा नहीं है तो वे समुचित रूप से देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों का पालन नहीं करेंगे। इसी प्रयोजन हेतु एक विशेषाधिकार दिया गया है, परन्तु सभा में ही स्वतंत्र भाषण देने तक इसको आयंत्रित रखना चाहिये। बाहर दुहराने नहीं दिया जा सकता है। स्थिति यह है कि किसी व्यक्ति के सदस्य होने के कारण ही वह जो कुछ चाहे नहीं कर सकता है। ब्रिटिश पार्लियामेंट में यही स्थिति है और इस बात में हम उनके अनुरूप होना चाहते हैं। मैं किसी भी संशोधन के विरोध में हूं और चाहता हूं कि यह अनुच्छेद जिस रूप में हैं उसी रूप में स्वीकार किया जाये। हाउस आफ कामन्स के उल्लेख के सम्बन्ध में मुझे तो कोई हानि नहीं दिखाई देती, विशेषकर चूंकि अभी-अभी हम संयुक्त राष्ट्र के सदस्य हो गये हैं। जैसा कि कल स्वयं आपने बताया था कि हम जो कुछ करते चले आ रहे हैं यह उसी के अनुसार है और जब तक हम अंग्रेजी भाषा को पूर्णतया छोड़ न दें तब तक हम ऐसा कर सकते हैं।

***अध्यक्ष:** हमारे समक्ष एक ऐसे विषय पर बड़ा रोचक विचार-विमर्श हुआ जो किसी संशोधन में नहीं है। किसी विशिष्ट खंड में परिवर्तन करने अथवा संपरिवर्तन करने के लिये

ऐसा कोई संशोधन पेश नहीं किया गया जिस पर पंडित मैत्र बोले हैं। इस विषय पर तो कोई संशोधन नहीं है।

अब मैं मत लूंगा। क्या डा. अम्बेडकर कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** जी नहीं। यदि उत्तर में श्री कामत कुछ नहीं चाहते हैं तो। श्री अल्लादी तथा अन्य व्यक्तियों ने उत्तर दे ही दिये हैं और मैं भी सम्भवत: विभिन्न प्रकार से बहुत कुछ वे ही बातें कहता।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1625, श्री कामत का संशोधन।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 85 के खंड (3) में 'as are enjoyed by the members of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom at the commencement of this Constitution' (तब तक वे ही होंगी जो इस विधान के प्रारम्भ पर युनाइटेड किंगडम के पार्लियामेंट के हाउस आफ कामन्स के सदस्यों को प्राप्त हैं) शब्दों के स्थान में 'as were enjoyed by the members of the Dominon Legislature of India immediately before the commencement of this Constitution' (तब तक वे ही होंगी जो इस विधान के प्रारम्भ होने से सद्यपूर्व भारतीय अधिराज्य विधान-मंडल को प्राप्त हैं) शब्द रखे जायें।''

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् श्री जसपतराय कपूर का संशोधन संख्या 1627 है। मैं समझता हूं कि डा. अम्बेडकर इसे स्वीकार करने के इच्छुक हैं।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 85 के खंड (4) में 'a House of Parliament' (संसद के किसी आगार में) शब्दों के पश्चात् 'or any Committee thereof' (अथवा उसकी किसी समिति में) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

*संशोधन स्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् प्रो. शाह का संशोधन संख्या 1631।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 85 के खंड (4) के पश्चात् निम्न नवीन खंड प्रविष्ट किया जाये:

'(5) In all matters of the privileges of the House of Parliament or of members of thereof the House concerned shall be sole judge and any

[अध्यक्ष]

order, decree or sentence duly passed by that House shall be enforced by the officers or under the authority thereof.'

[(5) संसद के किसी आगार अथवा उसके सदस्यों के विशेषाधिकार के विषय में तत्सम्बन्धी आगार ही एकमात्र न्यायाधीश होगा और उस आगार द्वारा उचित रूप से पारित किये गये किसी आदेश, डिक्री अथवा दंडादेश का उसके अधिकारियों द्वारा अथवा उसके प्राधिकार के अधीन प्रवर्त्तन किया जायेगा।]

*संशोधन अस्वीकार किया गया।*

***अध्यक्ष:** अब मैं श्री जसपतराय कपूर के संशोधन संख्या 1627 के अनुसार संशोधित रूप में अनुच्छेद 85 पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 85 विधान का अंग बने।''

*संशोधन स्वीकार किया गया।*

*संशोधित रूप में अनुच्छेद 85 विधान में प्रविष्ट किया गया।*

***अध्यक्ष:** इससे पूर्व कि हम सभा स्थगित करें मैं सभा के समक्ष एक सुझाव रखना चाहता हूं। सम्भवत: सदस्य इस बात से परिचित होंगे कि आगामी शनिवार और रविवार को देहरादून में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की बैठक होगी, यह सुझाव किया गया है कि हम एक दिन के लिये स्थगित करें, पर मैं नहीं समझता हूं कि इस बैठक के कारण हम इस सभा की कार्यवाहियों को बन्द रखें। यदि सदस्यों को मान्य है तो मैं यह सुझाव रखता हूं कि सोमवार को प्रात:काल बैठक करने के बजाय दोपहर बाद बैठक रखें। देहरादून से लौटने वालों को अपने अधिवेशन में उपस्थित होने के लिये सोमवार को प्रात:काल के बजाय दोपहर बाद बैठक रख सकते हैं। मैं आगामी सोमवार को सायंकाल के पांच बजे से आठ बजे तक का सुझाव करता हूं।

***माननीय सदस्यगण:** जी हां।

***अध्यक्ष:** अब सभा कल प्रात:काल आठ बजे तक के लिये स्थगित की जाती है।

*इसके पश्चात् शुक्रवार, 20 मई सन् 1949 के प्रात:काल 8 बजे तक के लिये सभा स्थगित हुई।*